मनुष्य क्या है?

अध्याय
तीन

पाप का श्राप

THIRD MILLENNIUM MINISTRIES

Biblical Education. For the World. For Free.

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

© थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ 2016 के द्वारा

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन का कोई भी हिस्सा प्रकाशक, थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़, इन्टरनेशनल., 316 लाईव ओक रोड़., कैसलबरी, फ्लोरिडा 32707 से लिखित अनुमति के बिना समीक्षा, टिप्पणी, या छात्रवृत्ति के प्रयोजनों के लिए संक्षिप्त टिप्पणियों को छोड़कर किसी भी रूप में या लाभ प्राप्ति के लिए किसी भी तरह से पुन:उत्पादित नहीं किया जा सकता है।

यदि कहीं और नहीं बताया गया तो पवित्रशास्त्र की सभी टिप्पणियाँ हिन्दी की पवित्र बाइबिल से ली गई हैं। 1973, 1978, 1984, 2011 अंतरराष्ट्रीय बाइबिल सोसायटी © सर्वाधिकार सुरक्षित। जानडरवॉन बाइबिल प्रकाशक की अनुमति के द्वारा प्रयुक्त किए गये हैं।

थर्ड मिलेनियम की मसीही सेवा के विषय में

1997 में स्थापित, थर्ड मिलेनियम मसीही सेवकाई एक लाभनिरपेक्ष मसीही संस्था है जो कि **मुफ्त में**, **पूरी दुनिया के लिये**, **बाइबल पर आधारित शिक्षा** मुहैया कराने के लिये समर्पित है। उचित, बाइबल पर आधारित, मसीही अगुवों के प्रशिक्षण हेतु दुनिया भर में बढ़ती मांग के जवाब में, हम सेमीनरी पाठ्यक्रम को विकसित करते हैं एवं बाँटते हैं, यह मुख्यतः उन मसीही अगुवों के लिये होती है जिनके पास प्रशिक्षण साधनों तक पहुँच नहीं होती है। दान देने वालों के आधार पर, प्रयोग करने में आसानी, मल्टीमीडिया सेमीनरी पाठ्यक्रम का 5 भाषाओं (अंग्रेजी, स्पैनिश, रूसी, मनडारिन चीनी और अरबी) में विकास कर, थर्ड मिलेनियम ने कम खर्च पर दुनिया भर में मसीही पासबानों एवं अगुवों को प्रशिक्षण देने का तरीका विकसित किया है। सभी अध्याय हमारे द्वारा ही लिखित, रुप-रेखांकित एवं तैयार किये गये हैं, और शैली एवं गुणवत्ता में द हिस्ट्री चैनल © के समान हैं। सजीवता के प्रयोग एवं शिक्षा के क्षेत्र में विशिष्ट चलचित्र उत्पादन के लिये थर्ड मिलेनियम 2 टैली पुरस्कार जीत चुका है, और हमारा पाठ्यक्रम 192 भी ज्यादा देशों में प्रयोग हो रहा है। हमारी सामग्री डी.वी.डी, छपाई, इंटरनेट, उपग्रह द्वारा टेलीविज़न प्रसारण, रेडियो, और टेलीविज़न प्रसार का रूप लेते हैं।

हमारी सेवकाई के बारे में अधिक जानकारी के लिए और यह जानने के लिए कि आप किस प्रकार से उसमें शामिल हो सकते हैं, कृपया हमारी वैबसाइट http://thirdmill.org. पर जाएँ।

विषय-वस्तु सूची

I. परिचय **1**

II. उत्पत्ति **1**

क. मनुष्य जाति 2

ख. व्यक्तिगत् 3

ग. लेखक 5

III. चरित्र **9**

क. अधर्म 9

ख. प्रेमरहित 11

IV. परिणाम **15**

क. भ्रष्टता 15

1. धारणाएँ 16
2. व्यवहार 17
3. भावनाएँ 19

ख. अलगाव 20

ग. मृत्यु 22

V. सारांश **23**

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

मनुष्य क्या है?

अध्याय तीन

पाप का श्राप

परिचय

हम में से अधिकांश को अंतिम संस्कार में सम्मिलित होने का अवसर मिला है। यद्यपि हम वहाँ पर केवल एक या दो बार ही गए होंगे, परन्तु हमारे लिए यह इतना ही बहुत होता है। मसीही संस्कार के ऊपर, हम आशा को व्यक्त करते हैं, क्योंकि हम जानते हैं कि हम अन्तत: हमारे मरे हुए मित्रों और प्रिय जनों को पुन: मिल जाएँगे। परन्तु हम फिर भी रोते हैं क्योंकि हम दर्द, कठिनाई और मृत्यु से घृणा करते हैं जो हमारे इस संसार में पाप के कारण आए हैं। हम पहचान जाते हैं कि यदि पाप न होता, तो अंतिम संस्कार जैसी कोई बात ही नहीं होती। पाप हमारे संसार, हमारे परिवारों, और हमारे जीवनों के ऊपर कहर की तरह टूट पड़ा। और अन्तत: यह हमें मार डालता है। हम यहाँ तक कैसे पहुँचे हैं? क्यों हमारे जीवनों में पाप की इतना अधिक शक्ति और उपस्थिति बनी हुई है।

मनुष्य क्या है?, के ऊपर हमारी श्रृंखला का यह तीसरा अध्याय है, और हमने इसका शीर्षक, "पाप का श्राप" दिया है। इस अध्याय में, हम यह जाँच करेंगे कि बाइबल मानवीय पाप, और विशेषकर मनुष्य के ऊपर पड़ने वाले इसके नकारात्मक प्रभाव के बारे में क्या कहती है।

पाप की कई प्रकार और श्रेणियाँ है। परन्तु इन सब का केन्द्र परमेश्वर के विरूद्ध विद्रोह में खड़ी हुई एक आत्मा है। वेस्टमिन्स्टर संक्षिप्त धर्म प्रश्नोत्तरी, मूल रूप से 1647 में प्रकाशित हुआ था, पाप के ऊपर अपनी सँख्या 14 के प्रश्न और उत्तर में सार्वभौमिक प्रोटेस्टेन्ट दृष्टिकोण को व्यक्त करता है। "पाप क्या है?" के प्रश्न के उत्तर में, संक्षिप्त धर्मप्रश्नोत्तरी उत्तर देती है:

> **पाप परमेश्वर की व्यवस्था का उल्लंघन, या उसके अनुरूप होने की किसी भी तरह की चाहत का होना है।**

जैसा कि हम इस पूरे अध्याय में देखेंगे, परमेश्वर की व्यवस्था की उपेक्षा और तिरस्कार मनुष्य के प्रथम पाप के केन्द्रीय भाग थे, और ये निरन्तर हमारी श्रापित परिस्थितियों का चित्रण हैं।

पाप के श्राप के ऊपर हमारे इस अध्याय को हम तीन भागों में विभाजित करेंगे। प्रथम, हम मनुष्य के पाप की उत्पत्ति का पता लगाएँगे। दूसरा, हम पाप के विशेष चरित्र का वर्णन करेंगे। और तीसरा, हम पाप के परिणामों के ऊपर ध्यान देंगे। आइए पाप की उत्पत्ति से आरम्भ करें।

उत्पत्ति

मानवीय पाप के अस्तित्व को नकारा नहीं जा सकता है। लोग परमेश्वर, एक दूसरे, अन्य प्राणियों, संसार और यहाँ तक स्वयं के विरूद्ध सभी प्रकार के अत्याचार को करते हैं। परन्तु पाप आया कहाँ से है? मनुष्य के पाप का अन्तिम स्रोत क्या है? और पाप ने कैसे मनुष्य को संक्रमित कर दिया?

हम मानवीय पाप की उत्पत्ति को तीन दृष्टिकोणों को देखने के द्वारा करेंगे। प्रथम, हम मानव जाति में पाप के उदगम की समीक्षा करेंगे। दूसरा, हम पाप के उदगम को व्यक्तिगत् लोगों में होने के ऊपर ध्यान को केन्द्रित करेंगे। और तीसरा, हम लेखक या मनुष्य के पाप के लिए अन्तिम दोषी के ऊपर ध्यान देंगे। आइए सर्वप्रथम हम मनुष्य जाति में पाप की उत्पत्ति को देखें।

मनुष्य जाति

अपने अस्तित्व के आरम्भ में ही मनुष्य पाप में गिर गया। सच्चाई तो यह है, कि प्रथम दो मनुष्य – आदम और हव्वा – सबसे पहले थे जो मानव जाति में पाप को लेकर आए। जैसा कि हमने पहले के अध्याय में देखा, आदम और हव्वा की सृष्टि पापरहित की गई थी। पाप के प्रति उनमें कोई गड़बड़ी नहीं थी, और पाप करने के लिए भी कोई

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

कारण नहीं था। परमेश्वर आरम्भ से ही उन की ओर कृपालु रहा था। उसमें भरोसा करने के लिए उनके पास प्रत्येक तरह का कारण था, जिन प्रावधानों को उसे उनके लिए निर्मित किया था उससे सन्तुष्ट होने के लिए प्रत्येक कारण उनके पास था, और प्रत्येक ऐसा कारण उनके पास था जिसमें वह निरन्तर उसके साथ वाचा की आशीषों को पा सकते थे और उसकी वाचा के श्रापों से बच सकते थे।

और वाचा की आशीषों में निरन्तर बने रहने और वाचा के श्रापों से बचे रहने के लिए, उन्हें परमेश्वर की वाचा की शर्तों के प्रति निष्ठावान बने रहने की आवश्यकता थी। उत्पत्ति 1, 2 कुछ बातों को सूचीबद्ध करती है जो वाचा के प्रति निष्ठा में बने रहने के लिए थी। इसमें आदम और हव्वा को इस पृथ्वी को मनुष्य जाति से भरने का, परमेश्वर की उपस्थिति को इसमें सही रूप से वास करने के लिए इसे तैयार करने के दायित्वों को पूरा करना था। उन्हें साथ ही परमेश्वर द्वारा सृजे हुए अन्य प्राणियों के ऊपर शासन भी करना था। और उन्हें अदन की वाटिका में कार्य करना और इसकी देखभाल करनी थी। इसके अतिरिक्त, उन्हें एक स्पष्ट निषेधाज्ञा दी गई थी: उन्हें भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष के फल को खाने की मनाही थी।

वाचा के इन दायित्वों ने ऐसी कुछ बातों की श्रेणियों की ओर संकेत दिया जिनसे परमेश्वर प्रसन्न होता है, और कुछ बातों की श्रेणियों की जिनसे वह अप्रसन्न होता था। ऐसी बातें जिनसे जो उसे प्रसन्न करती थी उन्हें परमेश्वर की वाचा की आशीषों के साथ पुरस्कृत किया जाएगा। और ऐसी बातें जो उसे अप्रसन्न करती थीं उन्हें परमेश्वर की वाचा के श्रापों के द्वारा दण्डित किया जाएगा।

दुर्भाग्य से, उत्पत्ति 3:1-7 में, सर्प ने हव्वा को मना किए हुए फल को खा लेने के लिए प्रलोभित किया, और उसने इसे खा लिया। तब उसने इसमें से कुछ को आदम को दिया, और उसने भी इसे खा लिया। तुरन्त, उन्होंने पहचान लिया कि वे नंगे थे और उन्होंने शर्म को महसूस किया। उत्पत्ति यह दावा नहीं करती है कि वृक्ष में मनुष्य जाति को पापी बनाने के लिए किसी तरह की कोई शक्ति नहीं थी। इसकी अपेक्षा, यह आदम और हव्वा की निष्ठाहीनता थी जिसने उन्हें अपराध बोध और शर्म की भावना की ओर उनका मार्गदर्शन किया।

इसके पश्चात्, उत्पत्ति 3:8-24 में, परमेश्वर आदम और हव्वा का सामना करता है, और उन्हें उनकी निष्ठाहीनता के कारण शाप देता है। धर्मशास्त्री अक्सर इस पूरी घटना को – सर्प के द्वारा प्रलोभन से लेकर परमेश्वर के न्याय के आने को – "पाप में गिरने" का नाम देते हैं। यह नाम "पाप में गिरना" उस विचार को प्रतिबिम्बित करता है कि आदम और हव्वा के पाप ने मनुष्य को परमेश्वर की कृपा और आशीषों से नीचे गिरा दिया। उदाहरण के लिए, उत्पत्ति 3:16 में, परमेश्वर ने हव्वा से कहा:

> **मैं तेरी पीड़ा और तेरे गर्भवती होने के दु:ख को बहुत बढ़ाऊँगा; तू पीड़ित होकर बालक उत्पन्न करेगी; और तेरी लालसा तेरे पति की ओर होगी, और वह तुझ पर प्रभुता करेगा (उत्पत्ति 3:16)।**

परमेश्वर के शाप ने इस पृथ्वी पर परमेश्वर के स्वरूप की वृद्धि करने के हव्वा के दायित्व को समाप्त नहीं किया। अपितु इसने यह सुनिश्चित किया इस दायित्व को पूरा करना उसके लिए दर्द से भरा हुआ होगा। आदम के साथ उसके वैवाहिक जीवन में झगड़ा भी इसके परिणामस्वरूप आ गया। और उत्पत्ति 3:17-19 में, परमेश्वर ने इसी के जैसे शाप को आदम के ऊपर भी दे दिया:

> **भूमि तेरे कारण शापित है। तू उसकी उपज जीवन भर दु:ख के साथ खाया करेगा : और वह तेरे लिये काँटे और ऊँटकटारे उगाएगी, और तू खेत की उपज खाएगा; और अपने माथे के पसीने की रोटी खाया करेगा, और अन्त में मिट्टी में मिल जाएगा क्योंकि तू उसी में से निकाला गया है; तू मिट्टी तो है और मिट्टी ही में फिर मिल जाएगा (उत्पत्ति 3:17-19)।**

परमेश्वर ने इस भूमि की खेती करने और उसको अपने अधीन कर लेने के आदम के दायित्व को भी समाप्त नहीं किया। उसने मात्र इसे दर्द से भरा हुआ और अधिक कठिन कर दिया। यहाँ तक कि ज्यादा कठोर, दोनों अर्थात् आदम और हव्वा को उनके पाप के कारण मृत्यु का अनुभव करना होगा।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

पाप में गिरने के परिणामस्वरूप, परमेश्वर ने पुरूष और स्त्री, और सचमुच में, पूरी सृष्टि का न्याय किया। तदनुसार, उदाहरण के लिए, पतन से पहले जिस कार्य को करने के लिए आदम और हव्वा पहले ठहराए गए थे, वही उनके लिए दुखदाई बन गया, और इसलिए, मनुष्य का उसके कार्य के साथ प्रेम-घृणा का सम्बन्ध है। एक बार फिर से, पुरूष और स्त्री के मध्य का सम्बन्ध, जो कि परमेश्वर के और अधिक स्वरूपों की पुन:-रचना के लिए परमेश्वर की ओर से दिया हुआ वरदान था – दर्द से भरा हुआ हो गया, और कुल मिलाकर, मूल रूप से, परिणाम यह निकला कि जो अच्छी बातें परमेश्वर ने आदम और हव्वा को निरन्तर आनन्द मनाते रहने के लिए दी थी, उनका वह आनन्द तो ले सकता था, परन्तु उसके पश्चात्, वास्तव में, वे भी विकृत हो गई और कुछ अर्थों में भ्रष्ट हो गई, और उनका अब अपनी पूर्णता में आनन्द नहीं लिया जा सकता है।

- डॉ. शिमौन विबर्ट

हम नहीं जानते उस समय क्या घटित हुआ होता यदि आदम और हव्वा ने पाप न किया होता। कुछ विश्वास करते हैं जब तक वे पाप न करते तब तक मनुष्य बिना किसी खटके वाटिका में रह सकते थे। अन्य यह विश्वास करते हैं कि आदम और हव्वा परख अवधि में थे; और यदि वह अपनी इस परख अवधि में सफल हो जाते, तो वह वहाँ पर शाश्वतकाल के लिए रहते। परन्तु वास्तविकता यह है कि उन्होंने पाप *किया* और उनका पाप मानव जाति में पाप के उदगम का कारण हुआ।

मानव जाति में पाप की उत्पत्ति को देख लेने के पश्चात्, आइए हम व्यक्तिगत् लोगों में पाप के प्रवेश किए जाने की ओर मुड़ें।

व्यक्तिगत्

यदि आदम और हव्वा के पाप ने किसी और को प्रभावित नहीं किया होता, तब प्रत्येक व्यक्ति उसी जैसे परिणाम का सामना करेगा जैसा आदम और हव्वा ने किया था। प्रत्येक व्यक्ति को अपने स्वयं के लिए निर्णय लेना होता कि वह पापरहित रहेगा या पाप में गिरेगा। परन्तु पवित्रशास्त्र यह शिक्षा देता है कि आदम और हव्वा का शाप उनके *सभी* प्राकृतिक वंशजों के ऊपर लागू हो गया – जिसका अर्थ है कि यीशु को छोड़कर प्रत्येक व्यक्ति के ऊपर। सुनिए आदम के पाप के बारे में रोमियों 5:12-19 में पौलुस ने क्या लिखा है:

इसलिये जैसा एक मनुष्य के द्वारा पाप जगत में आया, और पाप के द्वारा मृत्यु आई, और इस रीति से मृत्यु सब मनुष्यों में फैल गई, इसलिये कि सब ने पाप किया... [क्योंकि] जब एक मनुष्य के अपराध के कारण मृत्यु ने उस एक ही के द्वारा राज्य किया... [क्योंकि] जैसा एक मनुष्य के आज्ञा न मानने से बहुत लोग पापी ठहरे (रोमियों 5:12-19)।

आदम का अनाज्ञाकारिता से भरे हुए एक कार्य ने सारी मनुष्य जाति को अपराधी ठहरा दिया क्योंकि आदम मनुष्य जाति के साथ बाँधी गई वाचा का प्रधान था। वह न केवल स्वयं को प्रस्तुत करता है, अपितु अपनी पत्नी को भी, और प्रत्येक अन्य मानवीय प्राणी को जो कि उसके द्वारा प्राकृतिक मानवीय वशं में उस के माध्यम से निकल आएगा। उसका पाप हमारे पाप के रूप में गिना गया। और उसका अपराध हमारा अपराध बन गया। और क्योंकि हम इस अपराध में साझे होते हैं, हम इस अपराध के विरोध में परमेश्वर के श्राप को भी साझा करते हैं, जिसमें मृत्यु और भ्रष्टता भी सम्मिलित हैं। इसलिए ही पौलुस यह कह सका कि आदम के पाप का परिणाम मानवीय मृत्यु था, और यह कि इसने सभी मनुष्यों को पापी के रूप में परिवर्तित कर दिया। आदम के माध्यम से, पाप ने हम सभों को भ्रष्ट कर दिया, ताकि हम जो इस संसार में उत्पन्न हुए हैं वह पहले से ही आदम के पाप के अपराधी, पाप के दासत्व में, और मृत्यु के अधीन हैं। या जैसे कि पौलुस 1 कुरिन्थियों 15:22 में इसे इस तरह से लिखता है:

आदम में सब मरते हैं (1 कुरिन्थियों 15:22)।

परमेश्वर सारी मानवजाति को संघीय नेतृत्व के धर्मसिद्धान्त के कारण आदम के पाप के लिए जवाबदेह मानता है। आदम हमारा संघीय प्रधान था, और है। अब, इसे समझने का एक तरीका एक जाति या एक राज्य के बारे में सोचने से है। दो तरह के राज्य हैं, और इनमें से प्रत्येक राज्यों का एक राजा है। यदि आप राज्य 'क' के नागरिक हैं और राज्य 'क' का राजा संघीय प्रधान होने के कारण राज्य 'ख' के राजा के विरूद्ध युद्ध का ऐलान कर देता है, तो आप भी राज्य 'ख' के विरूद्ध युद्ध में सम्मिलित हैं। ऐसा ही धर्मविज्ञान में भी होता है। आदम संघीय प्रधान था; जब वह सृजा गया था, तब हम आदम में थे। वह हमारा संघीय प्रतिनिधि है, इसलिए जब वह गिरता है, हम उसमें गिरते हैं। अब, यदि हमारी इस बात के साथ कोई समस्या है, तो हम परेशानी में हैं, क्योंकि उद्धार इसी तरीके से कार्य करता है। पौलुस रोमियों 4 में कहता है कि मसीह हमारा संघीय प्रधान बन गया ठीक वैसे ही, जैसे आदम में "सबने पाप किया," मसीह में सभी जीवित किए गए। इसलिए, हमारा संघीय प्रधान होने के नाते मसीह सारी व्यवस्था को पूरा करता, जहाँ प्रथम आदम असफल हो गया, वह सफल होता और मृत्यु, नरक और कब्र के ऊपर विजय को प्राप्त करता है। वह पूर्णता से धर्मी है जिस से वह हम में धार्मिकता को रोपित कर सकता है और फिर वह अपनी निष्क्रिय आज्ञाकारिता में उस मृत्यु को जो हमारे ऊपर आदम हमारे संघीय प्रधान के कारण थी ले लेता है, जिससे कि उसकी निष्क्रिय और सक्रिय आज्ञाकारिता में हमारा पापी होना उसमें रोपित हो जाए और उसकी धार्मिकता हम में रोपित हो जाए। यह संघीय प्रधान का *दूसरा पहलू* है। इस तरह से आप आदम के संघीय प्रधान होने की सराहना तब तक नहीं करते हैं जब तक आप मसीह के संघीय प्रधान होने को सराह न लें।

- डॉ वौडे बूक्कॉम, जूनीयर

हो सकता है कि इस तरह से सोचना अजीब सा लगे, परन्तु यह वास्तव में परमेश्वर के लिए कृपा से भरा हुआ था जब उसने मानवाजाति का न्याय आदम में किया। हमारी अपेक्षा आदम के पास पाप से बचने की बहुत अधिक क्षमता थी। और उसने बहुत कम परीक्षा का सामना किया। वह ऐसे संसार में उत्पन्न नहीं हुआ जिसमें पाप बड़े पैमाने पर व्याप्त है। वह कई अन्य लोगों के द्वारा चलाए जा रहे पापपूर्ण प्रभाव के अधीन नहीं था। इसके अतिरिक्त, वह मूल रूप से वाटिका में परमेश्वर के साथ चला फिरा और उससे वार्तालाप किया। बिना किसी प्रश्न के, परमेश्वर के बारे में उसका ज्ञान और अनुभव हमारी अपेक्षा कहीं अधिक था। उसमें साथ ही बहुत अधिक मात्रा में व्यक्तिगत् धार्मिकता, पाप रहित सृजे जाने के कारण थी। मसीह को छोड़कर किसी अन्य के पास कभी भी पाप का विरोध करने के लिए ऐसी व्यक्तिगत् क्षमता नहीं आई जो कि आदम की अपेक्षा कहीं अधिक थी। यदि हमें कभी आदम के द्वारा सामना की गई परीक्षा जैसी का ही सामना करना पड़ जाए, तो हम बहुत ही अधिक दुर्गति के साथ असफल हो जाएंगे। इसलिए, उसके द्वारा हमारा प्रतिनिधित्व किये जाने के वास्तव में बहुत अधिक लाभ हैं।

यह देखना आसान है कि परमेश्वर ने पाप के अपराध को सीधे ही हम पर लागू कर दिया क्योंकि हमें आदम के द्वारा प्रस्तुत किया गया था। परन्तु धर्मशास्त्री कुछ सीमा तक इस बात पर बँटे हुए हैं जब बात उस प्रक्रिया की आती है जिसके माध्यम से पाप एक व्यक्ति को भ्रष्ट करता और उसमें वास करता है। कुछ विश्वास करते हैं कि पाप सीधे ही हम पर परमेश्वर के द्वारा आदम में जिस अपराध को हम साझा करते है उसे उचित वैधानिक दण्ड देने के नाते लागू किया है। अन्य विश्वास करते हैं कि पाप हमने हमारे माता पिता से विरासत में पाया है। वे यह विश्वास करते हैं कि यह हम में ठीक उसी तरह से प्रगट हुआ जिस तरह हमारे शरीर हमारे माता पिता से निर्मित हुए हैं। कुछ भी क्यों न हो, पाप *प्रत्येक* प्राणी को उसे गर्भ में आने के क्षण से ही भ्रष्ट कर देता है। भजन संहिता 58:3 कहता है कि दुष्ट लोग जन्म से ही पाप से भरे हुए होते हैं। और भजन संहिता 51:5 में, दाऊद बेतशेबा के साथ किए हुए अपने व्यभिचार को स्वीकार करते हुए यह विलाप करता है कि वह तब से पाप से भरा हुआ जब से वह अपनी माता के गर्भ में पड़ा था। इस कारण, यहाँ तक कि जो बच्चे गर्भ में मर जाते हैं उन्हें भी यीशु के द्वारा बचाए जाने की आवश्यकता है। जैसा कि यीशु ने यूहन्ना 14:6 में कहा है:

मार्ग और सत्य और जीवन मैं ही हूँ; बिना मेरे द्वारा कोई पिता के पास नहीं पहुँच सकता (यूहन्ना 14:6)।

यह सच्चाई कि कोई भी पिता के पास यीशु मसीह के बिना नहीं आ सकता है इस ओर संकेत देता है कि प्रत्येक को, बिना किसी अपवाद के, पापों से क्षमा और शुद्धता की आवश्यकता है। हमारे पाप के कारण, हम सभी इस संसार में आत्मिक मृत्यु की अवस्था के साथ आते हैं, ठीक वैसे ही जैसे पौलुस ने इफ़िसियों 2:1-3 में शिक्षा दी है। और हम सभी हम में वास करते हुए पाप और पाप से भरे हुए, भ्रष्ट स्वभाव, जैसा कि रोमियों 7:14-15 में वर्णित किया है, संघर्षरत् हैं। इनमें से प्रत्येक समस्या अदन की वाटिका में आदम के प्रथम पाप के साथ उत्पन्न हुई। यह अपराध न केवल मानव जाति में पाप की उत्पत्ति थी, अपितु साथ ही प्रत्येक मनुष्य में पाप की उत्पत्ति थी।

अब क्योंकि हमने मनुष्य जाति में और एक व्यक्ति में पाप की उत्पत्ति के ऊपर ध्यान दे दिया है, इसलिए आइए हम हमारे ध्यान को मनुष्य के पाप के लेखक की ओर केन्द्रित करें।

लेखक

जब हम मनुष्य के पाप के लेखक के लिए बात करते हैं, तो हमारे ध्यान में वह व्यक्ति होता है जिसे अन्ततः अपराधी ठहराया जाए। उदाहरण के लिए, इस बारे में विचार करें कि कोई जब बिलियर्ड जैसे खेल को खेलता है तो क्या घटित होता है। एक खिलाड़ी क्यू छड़ी को आगे बढ़ाते हुए, क्यू गेंद को मारता है, जो जाकर दूसरी क्यू गेंद से टकराती है, ताकि आगे की ओर बढ़े। हम इस घटना के विभिन्न भागों को किसी भी भाग के दृष्टिकोण से वर्णन कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, हम कह सकते हैं कि एक क्यू छड़ी दूसरी क्यू गेंद को आगे बढ़ाने का कारण है, और या फिर यह कि क्यू गेंद ने दसूरी क्यू गेंद को आगे बढ़ाया है। परन्तु कोई भी यह नहीं कह सकता है कि क्यू गेंद, या यहाँ तक कि क्यू छड़ी, इन सभी की गतियों की उत्पत्ति था। स्पष्ट है कि, यह खिलाड़ी ही था जिसने पूरे खेल को आरम्भ किया, सबसे पहले क्यू छड़ी को घुमाने का निर्णय लेने, और तब इसे वास्तव में उपयोग करने के द्वारा।

और कुछ ऐसा ही तब सत्य होता है जब लोग पाप करते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है, कि मनुष्य का पाप बहुत ज्यादा पेचीदा है, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की अपनी एक इच्छा है और वह घटनाओं के पहलूओं को उत्पन्न कर सकता और इसका लेखक हो सकता है। परन्तु कहीं पर, अभी भी घटनाओं के घटित होने के लिए कोई एक अन्तिम स्रोत अस्तित्व में है।

लेखक का यह विचार बहुत ही महत्वपूर्ण है क्योंकि मसीहियत के बहुत से विरोधियों ने परमेश्वर को मनुष्य के पाप में गिरने का "लेखक" होने का दोषी ठहराया है। अर्थात्, उन्होंने मनुष्य के पाप के लिए परमेश्वर को अपराधी ठहाराने की कोशिश की है। उन्होंने ऐसा दो प्रयोजनों को ध्यान में रखते हुए किया है। एक ओर तो, कुछ यह दलील देते हैं कि यदि परमेश्वर पाप से भरा हुआ है, तो वह परमेश्वर होने के योग्य नहीं है, और निश्चित रूप से आराधना के योग्य नहीं है। दूसरी ओर, कुछ ने यह कहा है कि यदि परमेश्वर पाप का अन्तिम स्रोत है, तब मनुष्य जाति पाप के लिए उत्तरदायी नहीं है, इसलिए उसे दण्डित करना अन्याय है। परन्तु पवित्रशास्त्र क्या कहता है?

आपको स्मरण होगा कि आदम और हव्वा के द्वारा मना किए हुए फल को खा लेने के पश्चात् परमेश्वर ने सर्प और आदम और हव्वा का न्याय किया। और इसमें कोई सन्देह नहीं है कि उस न्याय में, आदम और हव्वा दोनों ने किसी अन्य को दोषी ठहराने की कोशिश की। आदम पहिला व्यक्ति था जिसने दोष को किसी और पर लगाने का प्रयास किया। उत्पत्ति 3:12 में, आदम कहता है:

> **आदम ने कहा, "जिस स्त्री को तू ने मेरे संग रहने को दिया है उसी ने उस वृक्ष का फल मुझे दिया, और मै ने खाया" (उत्पत्ति 3:12)।**

आदम ने फल खाने का इन्कार नहीं किया, अपितु उसने इसके प्रति उत्तरदायी होने से बचने का प्रयास किया। प्रथम, उसने इसके लिए अपनी पत्नी को दोषी ठहराया, जिसने उसे यह फल खाने के लिए दिया था। और दूसरा, उसने अस्पष्टता से परमेश्वर को दोषी ठहराया, क्योंकि परमेश्वर ने ही उसे सृजा था। उत्पत्ति 3:13 में, हव्वा ने यह कहते हुए दोष को सर्प के ऊपर लगा दिया:

> **सर्प ने मुझे बहका दिया तब मै ने खाया (उत्पत्ति 3:13)।**

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

दोनों अर्थात् आदम और हव्वा ने यह तर्क दिया कि अन्तिम दोषी, या उनके पाप का "लेखक" किसी अन्य को होना चाहिए। और जैसा कि प्रगट होता है कि उन्होंने ऐसा दण्ड से बचने के प्रयास में किया। परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं है, परमेश्वर उनकी तार्किकता से सहमत नहीं हुआ। उसने इनकार नहीं किया वे अन्यों के द्वारा प्रभावित थे। परन्तु उसने इस तथ्य को इन्कार कर दिया था कि उन्हें दण्ड न देने के लिए इन बाहरी प्रभावों ने सन्तोषजनक तर्कों को उपलब्ध कर दिया था। तदनुसार, आगे वाले वचनों में, परमेश्वर ने सर्प को स्त्री को बहकाने के लिए दण्डित किया। उसने हव्वा को, फल खाने के द्वारा, परमेश्वर के साथ विश्वासघात करने, और अपनी पति को गलत मार्ग पर ले जाने के लिए दण्डित किया। और उसने आदम को उसकी पत्नी के द्वारा गलत मार्ग पर चले जाने, और फल को खा लेने के लिए दण्डित किया। जहाँ तक परमेश्वर का सम्बन्ध है, सबसे अन्त में आदम और हव्वा अपराधी थे क्योंकि उन्होंने उसके आदेश की अवहेलना की थी।

इस वृतान्त में, हम कह सकते हैं कि पाप का अन्तत: "लेखक" सर्प हुआ, क्योंकि वह पहला पात्र था जो पाप के विचार के साथ आया था, और पहला प्राणी था जिसने मनुष्य जाति को पाप में पड़ जाने का प्रयास किया। परन्तु आदम और हव्वा ने भी इस घटना में अपने स्वतंत्र चुनावों से योगदान दिया, और इस अर्थ में, मानवीय पाप का लेखक हुआ।

परन्तु यह फिर भी कुछ बहुत ही सामान्य जैसे: क्यों सर्प ने पाप किया? पाप करने के लिए सोचने वाला पहला प्राणी कौन था? क्यों उस प्राणी ने पाप किया? और, क्या परमेवर उसकी सृष्टि के द्वारा किए हुए पापों के लिए उत्तरदायी है? जैसे प्रश्न को छोड़ जाता है। पवित्रशास्त्र इन सभी प्रश्नों का उत्तर पूरी तरह से नहीं देता। परन्तु यह फिर भी हमें सबसे अधिक पहलूओं के उत्तर के लिए प्रर्याप्त सूचनाओं को प्रदान करता है।

प्रथम और सबसे महत्वपूर्ण, पवित्रशास्त्र गौरवपूर्ण तरीके से जोर देता है कि पाप का दोषी या अपराधी, या किसी को पाप करने के लिए मजबूर करने वाला नहीं है। सच्चाई तो यह है, कि परमेश्वर स्वयं भलाई का सिद्ध मापदण्ड है। तदनुसार, अपनी परिभाषा के कारण, वह किसी भी बात के लिए दोषी नहीं हो सकता है। यूहन्ना ने यूहन्ना 1:5 में क्या लिखा को सुनिए:

परमेश्वर ज्योति है; और उसमें कुछ भी अन्धकार नहीं (1 यूहन्ना 1:5)।

अपने इस पत्र में, यूहन्ना लगातार "ज्योति" शब्द का दुहराव नैतिक शुद्धता को और "अन्धकार" को पाप और उसके प्रभावों को सूचित करने लिए उपयोग करता है। और यह बात स्पष्ट है: कि परमेश्वर पाप से पूरी तरह स्वतंत्र है।

परमेश्वर स्वयं भले और बुरे का अन्तिम मापदण्ड है। उससे परे कोई भी और अन्तिम नैतिक मापदण्ड नहीं है जो उसको तौल सके। इसके अतिरिक्त, पवित्रशास्त्र हमें व्यवस्थाविवरण 25:16, भजन संहिता 5:4, और जकर्याह 8:17 जैसे स्थानों में बताता है कि परमेश्वर पाप से घृणा करता है। और याकूब 1:13 कहता उसे पाप के द्वारा परीक्षा में नहीं डाला जा सकता है।

परन्तु क्योंकि परमेश्वर पास से स्वतंत्र है और परमेश्वर पाप से घृणा करता है, और परमेश्वर निश्चित रूप से पाप को रोकने के लिए पूरी तरह से सामर्थी, तो फिर पाप कैसे घटित हो गया? कैसे एक निष्पाप, सर्व-सामर्थी सृष्टिकर्ता एक ऐसी सृष्टि का निर्माण कर सकता है जो कि पाप की ओर चली जाएगी? अधिकांश धर्मशास्त्रियों ने इस प्रश्न का उत्तर परमेश्वर द्वारा सृजे हुए प्राणियों की स्वतंत्रता या आजाद इच्छा के होने के संदर्भ में दिया है।

> **यदि किसी ने समय की किसी भी अवधि के धर्मविज्ञान, बाइबल, मसीही विश्वास के बारे में सोचा है, तो शीघ्र या बाद में उसके मन में यह प्रश्न उठने वाला है, "ठीक है, क्यों परमेश्वर पाप का लेखक नहीं है?" और मैं सोचता हूँ कि हमें इसे स्वीकार करना होगा, और, सच्चाई तो यह है, कि दृढ़ता से यह अंगीकार करना होगा जो कुछ घटित हो रहा है वह सब कुछ उसकी महान् योजना का एक हिस्सा है। और इसलिए, परमेश्वर ही वह है जिसने अतीत की अनन्तता से सब कुछ की योजना बनाई है जिसे हम देखते हैं, और साथ ही उसके पास एक महान् प्रयोजन है। इसलिए, अतीत की अनन्तता से लेकर, भविष्य की अनन्तता**

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

की योजना एक महिमामयी उद्देश्य को पूरा करने वाली है...परन्तु हम यह नहीं कहते हैं कि परमेश्वर ही पाप का लेखक है क्योंकि परमेश्वर पाप के लिए सक्षम कारक नहीं है, और ऐसा कहने से मेरा यह अर्थ है कि वह इस "कार्य को करने वाला" नहीं है। हम अनुमति की अवधारणा से बहुत कुछ प्राप्त करते हैं, कि परमेश्वर ने नैतिक रूप से उत्तरदायी प्राणियों की रचना की और उसने उन्हें भले और बुरे को चुनाव करने की योग्यता दी। और जब भलाई की जाती है, तो यह परमेश्वर के अनुग्रह से होती है, और हम यह कहने के लिए शीघ्रता करते हैं कि परमेश्वर ने अच्छे को नियुक्त किया है। जब बुराई घटित होती है, तो हम कहते हैं कि यह परमेश्वर की अनुमति देने वाली इच्छा के भीतर घटित हुआ है, अर्थात् कि परमेश्वर ने ऐसा घटित होने की *अनुमति* दी है। यह वाटिका से लेकर उस दिन तक के लिए सत्य है जब तक शैतान यीशु के चरणों में नहीं झुक जाता और उसे प्रभु होने की घोषणा नहीं कर देता है।

- डॉ. केन किथेल

विभिन्न धर्मवैज्ञानिक परम्पराएँ स्वतंत्र इच्छा को विभिन्न तरीकों से समझती हैं। परन्तु इवैन्जेलिकल अर्थात् सुसमाचारवादी निम्नलिखित क्रम में घटनाओं और कारणों के घटित होने के ऊपर सहमत होने की मनोवृत्ति है। प्रथम, परमेश्वर ने स्वर्गदूतों की रचना की और उनमें पर्याप्त स्वतंत्र इच्छा को डाल दिया जिससे कि वे पाप करने और पाप से बचने के मध्य में चुनाव करने के लिए सक्षम थे। जब स्वर्गदूतों ने पाप करने को चुना, तो वे परमेश्वर की कृपा से रहित हो गए और उन्हें दुष्टआत्माओं के रूप में जाना गया। यहूदा 6 इन्हीं के बारे में उदधृत करता है जब वह ऐसा कहता है:

फिर जिन स्वर्गदूतों ने अपने पद को स्थिर न रखा वरन् अपने निज निवास को छोड़ दिया – उसने [परमेश्वर] उनको भी उस भीषण दिन के न्याय के लिए अन्धकार में, जो सदा काल के लिये है, बन्धनों में रखा है (यहूदा 6)।

दूसरा पतरस 2:4 इसी तरह की भाषा को इन नीचे गिरे हुए स्वर्गदूतों के वर्णन के लिए उपयोग करता है।

स्वर्गदूतों के पाप में गिरने के पश्चात्, परमेश्वर ने मनुष्य की रचना की और उसे अदन की वाटिका में रख दिया। स्वर्गदूतों के जैसे ही, मानव जाति को भी पर्याप्त स्वतंत्र इच्छा के साथ दोनों अर्थात् पाप करने और पाप न करने की इच्छा के साथ रचा गया।

हिप्पो का बिशप, अगस्तीन, जो ईस्वी सन् 354 से लेकर 430 के मध्य में रहे, ने इस स्थिति को *पौसी नॉन पिक्कारे* के रूप में वर्णित किया है। इस लतीनी भाषा के वाक्यांश को शाब्दिक रूप से "पाप न करने को सक्षम होना" के रूप में भाषान्तरित किया जा सकता है। परन्तु फिर भी, इसके धर्मवैज्ञानिक उपयोग में, यह वाक्यांश ज्यादातर सामान्य रूप में "पाप न करने की क्षमता" के शब्दों में भाषान्तरित किया जाता है। अगस्तीन के अनुसार, आदम और हव्वा को पाप से पूरी तरह बचने के लिए सामर्थ्य दी गई थी। परन्तु उनके पास पाप करने की क्षमता भी थी।

अदन की वाटिका में मनुष्य को रख दिए जाने के पश्चात्, शैतान, जो कि सबसे मुख्य गिरा हुआ स्वर्गदूत था, ने सर्प का रूप धारण कर लिया। और इस स्वरूप में, उसने हव्वा को निषेधित फल को भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष से खाने के लिए बहका दिया। यद्यपि उत्पत्ति सर्प की पहचान शैतान के साथ नहीं करती है, प्रकाशितवाक्य 12:9 और 20:2, दोनों ही शैतान को "पुराने साँप" के नाम से पुकारते हैं। और मत्ती 4:6 में, शैतान उसी रणनीति का उपयोग यीशु को बहकाने के लिए करता है जिसे सर्प ने हव्वा को वाटिका में बहकाने के लिए उपयोग किया था। दोनों ही घटनाओं में, रणनीति परमेश्वर के वचन का बोलना, करना और फिर उसका गलत रूप से लागूकरण करना था। इस तरह के कारणों से, अधिकांश इवैन्जेलिकल अर्थात् सुसमाचारवादियों ने अदन की वाटिका के सर्प की समानता शैतान के साथ की है।

चाहे कुछ भी हो, उत्पत्ति 3:6 दोनों अर्थात् हव्वा और तब आदम के द्वारा निषेधित फल के खाए जाने का वर्णन देती है। वे परमेश्वर के आदेश को जानते थे और उन्होंने स्वतंत्रता के साथ उसकी अनाज्ञाकारिता का चुनाव किया। वहाँ पर किसी भी आन्तरिक या बाह्य शक्ति से किसी तरह का दबाव नहीं था। उनके मन और निर्णय उनके

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

अपने थे। इस तरह से, परमेश्वर नहीं अपितु मानव जाति अपने पाप के लिए अपराधी थी। अब, हम अभी भी यह सोच सकते हैं कि क्यों परमेश्वर ने ऐसा *होने* दिया कि मनुष्य पाप करे। इससे क्या उद्देश्य पूरा होता है?

सदैव से मसीहियों के लिए बने रहने वालों प्रश्नों में से एक, और यह पूछना सही भी है, कि क्यों परमेश्वर ने आदम और हव्वा को पाप करने दिया? ऐसा हमारी समझ से परे है कि एक असीमित रूप से सर्वसामर्थी परमेश्वर कैसे कर सकता है, एक अर्थ में, इन सभी भयावह परिणामों को, सभी मृत्यु और पीड़ा और मानवीय दर्द को जिसे वह जानता था, आगे की सदियों में, हज़ारों वर्षों के मध्य में वह बनाए रखता है। क्यों परमेश्वर ने ऐसा होने दिया? ठीक है, हम नहीं जानते हैं। और यह हमारे लिए न्यायी के न्याय के सामने खड़े रहना अजीब हो कि उससे उसके व्यवहार के लिए कठिन नैतिक प्रश्नों को पूछें, परन्तु मैं सोचता हुँ कि अन्त में विश्वास ऐसा कहता है, कि परमेश्वर अवश्य ही अपने असीम ज्ञान और भलाई में निहित गणना के ऊपर आधारित होकर व्यवहार कर रहा होगा। और उसने अवश्य ही यह देखा होगा कि यद्यपि यह मानवीय स्वतंत्रता और गरिमा का उपयोग नहीं है जैसा कि उसने चाहा था, तौभी एक ज्यादा महान् भलाई इसे निरस्त करने की अपेक्षा मनुष्य के प्रतापी परीक्षण से निकल कर आएगी। और मैं सोचता हूँ, कि कदाचित्, अन्त में, हम इस प्रश्न के उत्तर को नहीं देखेंगे जब तक हम कृतज्ञता और आश्चर्य में बुराई के ऊपर महिमामयी विजय को देखने के योग्य नहीं हो जाते, जिसे अन्त में, मनुष्य के इस परीक्षण के द्वारा और प्रतिभागियों के दुखान्त विद्रोह के पश्चात् भी प्राप्त किया जाएगा। हमारे पास कोई स्पष्ट विचार नहीं है तौभी परमेश्वर की भव्य विजय कितनी ज्यादा महान् होने वाली है।

- डॉ ग्लीन जी. सक्रोजी

परमेश्वर के प्रयोजन सदैव हमारे लिए स्पष्ट नहीं हैं। और पाप को संसार में आने देने की अनुमति के पीछे उसके कारण भी कुछ सीमा तक रहस्यमयी हैं। यह सत्य है कि इतिहास ने एक भिन्न तरह की दिशा को लिया होता यदि परमेश्वर ने हमें पाप से बचा लिया होता। परन्तु यह स्पष्ट है कि परमेश्वर ने इस अपेक्षाकृत इसी को दिशा हमारे लिए चुन लिया। जैसा कि पौलुस ने इफिसियों 1:11 में लिखा है:

उसी में... जिसमें हम भी उसी की मनसा से जो अपनी इच्छा के मत के अनुसार सब कुछ करता है, पहले से ठहराए जाकर मीरास बने (इफिसियों 1:11)।

कुछ भी परमेश्वर की योजना या उसके नियंत्रण से परे कुछ घटित नहीं होता है। इसलिए, उसके पास निश्चित ही मनुष्य के पाप में गिरने देने के लिए कोई न कोई कारण होगा। हम केवल इतना जानते हैं, कि हम यह मान लें कि हमारे पाप उसे अपने गुणों को व्यक्त करने के लिए अवसर प्रदान करते हैं जो अन्यथा हमसे छिपे ही रह जाते यदि हमने पाप न किया होता। उदाहरण के लिए, वह कई बार मनुष्य के पाप के प्रति दया और धैर्य को व्यक्त करता है, और अन्य समयों में वह क्रोध को व्यक्त करता है। परमेश्वर इन गुणों की अभिव्यक्ति के द्वारा दोनों अर्थात् जाना जाता है और महिमा पाता है। इसलिए, ऐसा भाव है जिसमें वह सदैव हमारे पाप का निष्पादन करने के लिए महिमा को पाता है। हम यहाँ तक कि यह मान सकते हैं,

कि अन्तत: पाप विश्वासियों के लिए लाभ देने के लिए कार्य करता, इसे हमें आशीष देने की उसकी योजना को उपयोगी बनाता है। जैसा कि हम रोमियों 8:28 में पढ़ते हैं:

हम जानते हैं कि जो लोग परमेश्वर से प्रेम रखते हैं; उनके लिये सब बातें मिलकर भलाई ही को उत्पन्न करती है; अर्थात् उन्हीं के लिये जो उसकी इच्छा के अनुसार बुलाए हुए हैं (रोमियों 8:28)।

जो कुछ परमेश्वर करता है वह सही और भला होता है। उसमें पाप के अंश का एक भी संकेत नहीं है। इसलिए, हमें कभी भी यह कल्पना नहीं करनी चाहिए कि मनुष्य का पाप किसी तरह से उसे उसकी पवित्रता में आने में बाधा डालता है। इसके विपरीत, मनुष्य का पाप परमेश्वर को उसकी महिमा प्रगट करने, क्षमा को तरस और दया के माध्यम से व्यक्त करने, और उसको अपने न्याय और न्याय के द्वारा क्रोध को व्यक्त के लिए एक अवसर प्रदान करता है। और यह सभी बातें उसकी पूर्ण पवित्रता और भलाई को प्रदर्शित करती और उसमें योगदान देती

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

है। इस तरह से जब हम मनुष्य जाति, और व्यक्तिगत् लोगों में पाप की उत्पत्ति के बारे में सोचते हैं, हमें स्मरण रखना चाहिए कि दोष पूरी तरह से मनुष्य के कँधे के ऊपर टिका हुआ है।

अब क्योंकि हमने पाप के शाप को मनुष्य के पाप की उत्पत्ति के संदर्भ में देख लिया है, आइए हम हमारे ध्यान को पाप के अनिवार्य चरित्र की ओर करें।

चरित्र

पाप को पवित्रशास्त्र में पहचान करने के लिए सबसे आसान और निश्चित तरीका उन बातों के उदाहरणों को देखने की है जिसकी परमेश्वर मनाही करता, दोषी ठहराता या शाप देता है। जब हम ऐसा करते हैं, तो हम देखते हैं कि बाइबल पाप को उदधृत करने के लिए विभिन्न तरह के शब्दों की एक बड़ी मात्रा का उपयोग करती है। यह निरन्तर पाप को अन्याय, अपराध, लापरवाही, निशाने से चूक जाना, भटक जाना, भ्रष्टता, व्यर्थता, बेईमानी, ठेस पहुँचाना, विद्रोह, अशुद्धता, विश्वासघात, निष्ठाहीनता, दुस्साहस, अश्लीलता, वासना – यह सूची बढ़ती और बढ़ती चली जाएगी, और इसी तरह से प्रत्येक शब्द के ऊपर हमारा विचार विमर्श बढ़ता और बढ़ता चला जाएगा। इसलिए, उस प्रत्येक शब्द जिसे पाप की पहचान के लिए पवित्रशास्त्र करता है, को पता लगाने की अपेक्षा, हम हमारे ध्यान को पाप के सामान्य गुणों की ऊपर केन्द्रित करेंगे।

हम पाप के चरित्र को दो भागों में वर्णित करेंगे। प्रथम, हम यह देखेंगे कि पाप मौलिक रूप से अधर्म है। और दूसरा, हम देखेंगे कि यह प्रेमरहित है। आइए सबसे पहले पाप के अधर्मी होने के विचार को देखें।

अधर्म

आज ऐसा सोचना मसीहियों के लिए सामान्य बात है परमेश्वर की व्यवस्था अनावश्यक या यहाँ तक कि हमारे लिए नुक्सानदायी है। अक्सर, ऐसा इसलिए है क्योंकि वे पौलुस की उद्धार में व्यवस्था की भूमिका के बारे में दी हुई शिक्षा को गलत समझ लेते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है, कि यह सत्य है कि व्यवस्था हमें बचा नहीं सकती। यह केवल हमें दोषी ठहराती है। इसलिए ही गलातियों 5:4 में, पौलुस ने ऐसे लिखा:

> **तुम जो व्यवस्था के द्वारा धर्मी ठहरना चाहते हो, मसीह से अलग और अनुग्रह से गिर गए हो (गलातियों 5:4)।**

परन्तु ठीक यही वह बात है कि क्यों व्यवस्था पाप के गुणों और इसकी पहचान करने में हमारी सहायता के लिए उपयोगी है। हमें दोषी ठहराने में व्यवस्था की शक्ति हमारे पाप को पहचानने के लिए इसकी क्षमता में निहित है। जैसा कि पौलुस रोमियों 5:20 में लिखता है:

> **व्यवस्था बीच में आ गई कि अपराध बहुत हो, परन्तु जहाँ पाप बहुत हुआ वहाँ अनुग्रह उससे भी कहीं अधिक हुआ (रोमियों 5:20)।**

व्यवस्था पाप को विभिन्न तरीकों से बढ़ा देता है। उदाहरण के लिए, यह हमारे ऐसे दायित्व को पूरा करना रख देता है जिनकी मांग व्यवस्था से पहले कभी नहीं की गई थी। और यह हमारी पाप से भरी हुई लालसाओं को जो कुछ यह मना करती है उसकी ओर आकर्षित करने के द्वारा प्रेरित करता है। परन्तु फिर भी, व्यवस्था फिर भी *भली* है। यह फिर भी परमेश्वर के चरित्र का सच्चा प्रतिबिम्ब, और मापदण्ड हैं जिसके द्वारा पाप को मापा जा सकता है। जैसा कि पौलुस रोमियों 7:12 में लिखता चला गया:

> **इसलिये व्यवस्था पवित्र है, और आज्ञा भी ठीक और अच्छी है (रोमियों 7:12)।**

> **लोग अक्सर गलत सोच लेते हैं कि परमेश्वर की सारी व्यवस्था रोकने, मनुष्य के जीवन को रोकने के लिए दी गई थी। सच्चाई यह है, कि ऐसा बिल्कुल भी नहीं है। परमेश्वर की व्यवस्था मनुष्य को इसलिए दी गई की मनुष्य यह जाने कि [कैसे सही तरीके से]... जीवन यापन किया जाता है। परन्तु क्योंकि मनुष्य पाप में असमर्थ है, [व्यवस्था] कुछ ऐसी बन जाती है जिसे तब मनुष्य के द्वारा गलत समझ लिया जाता है। परमेश्वर को जान लेने के पश्चात् एक व्यक्ति, स्पष्टता से जान लेगा कि परमेश्वर की व्यवस्था उस व्यक्ति**

को इसलिए दी गई है कि वह ऐसे जीवन को प्राप्त करने में सक्षम हो जो भला है, जो परमेश्वर में पूर्ण है। इसलिए इसके साथ ही, सच्चाई में, एक विश्वासी को परमेश्वर की व्यवस्था के प्रति सकारात्मक तरीके से, कृतज्ञता के साथ प्रतिक्रिया व्यक्त करनी चाहिए, क्योंकि परमेश्वर की व्यवस्था उसे सुरक्षा प्रदान करती, उसकी संभाल और उसका मार्गदर्शन करती है। और परमेश्वर की व्यवस्था, परमेश्वर के वचन के अनुसार, कुछ ऐसी है कि जो स्वयं में ही पूर्ण है।

- रेव्ह. अगुस जी. सत्यापुत्रा, अनुवादित

पाप का अधर्मी चरित्र शीघ्र ही अदन की वाटिका में मनुष्य के पाप में गिरने से स्पष्ट हो जाता है। आदम और हव्वा ने केवल एक ही निषेधाज्ञा को परमेश्वर से प्राप्त किया था। और उन्होंने सीधे ही व्यवस्था को तोड़ने के द्वारा पाप कर लिया। और तब से प्रत्येक पाप ने इस अधार्मिकता को प्रदर्शित किया है।

मनुष्य के साथ बाँधी हुई परमेश्वर की वाचा के संदर्भ में पाप की अधार्मिकता के बारे में सोचें। हमने उल्लेख किया कि परमेश्वर की वाचा उसके हमारे प्रति कृपानिधान होने को प्रदर्शित करते हुए, हमसे निष्ठा की मांग करता है, और हमें हमारी निष्ठा और निष्ठाहीनता के लिए परिणामों का प्रदान करता है। ठीक है, *व्यवस्था* वह है जो उस निष्ठा का वर्णन करती है जिसकी मांग परमेश्वर हम से करता है। सब कुछ जिसे वह स्वीकार करता और आशीष देता है उसकी वाचाई व्यवस्था की मांग है – चाहे यह पवित्रशास्त्र में स्पष्टता के साथ प्रगट की है या नहीं। और सब कुछ जिसे वह दोषी ठहराता और शापित करता है वह उसकी वाचाई व्यवस्था में निषेधाज्ञा है – चाहे वह स्पष्ट रूप से पवित्रशास्त्र में मना है या नहीं। और इसलिए, सब कुछ जिसे हम करते हैं वह परमेश्वर की वाचा की आज्ञाकारिता है या इस व्यवस्था का उल्लंघन है। हमारे हृदयों का प्रत्येक अभिप्राय या तो परमेश्वर की महिमा और प्रसन्नता की खोज करता है, या अपने स्वयं की सन्तुष्टि की खोज करता है। प्रत्येक बात जिसे हम सोचते हैं, प्रत्येक कार्य जिसे हम करते हैं, प्रत्येक भावना जिसे हम महसूस करते हैं, या तो परमेश्वर के वाचाई राज्य के निर्माण की ओर एक कदम है या फिर इसके राजा के विरूद्ध विद्रोह की ओर एक कदम है। इन्ही बातों के कारण प्रेरित यूहन्ना ने 1 यूहन्ना 3:2-4 में ऐसे लिखा:

हे प्रियो, अभी हम परमेश्वर की सन्तान हैं, और अभी तक यह प्रगट नहीं हुआ, कि हम क्या कुछ होंगे! इतना जानते हैं, कि जब वह प्रगट होगा तो हम भी उसके समान होंगे, क्योंकि उस को वैसा ही देखेंगे जैसा वह है। और जो कोई उस पर यह आशा रखता है, वह अपने आप को वैसा ही पवित्र करता है, जैसा वह पवित्र है। जो कोई पाप करता है, वह व्यवस्था का विरोध करता है; और पाप तो व्यवस्था का विरोध है (1 यूहन्ना 3:2-4)।

इस संदर्भ में, यूहन्ना व्यवस्था को तोड़ने की तुलना यीशु के जैसे व्यक्ति की पूर्ण पवित्रता के साथ करता है। यही केवल वह दो विकल्प थे जिन्हें उसने देखा था। या तो हम निष्पाप हैं या फिर हम अधर्मी हैं।

यूहन्ना ने विश्वास किया कि व्यवस्था पवित्रशास्त्र में दिए हुए "करने" और "न करने" की सीमित सँख्या तक सीमित नहीं थी। इसकी अपेक्षा, यह परमेश्वर के पूर्ण चरित्र को सारांशित करती है। यह चरित्र स्वयं में ही व्यवस्था की अन्तिम पूर्णता है, जबकि पवित्रशास्त्र में दी हुई लिखित व्यवस्था केवल इसकी व्याख्या करती है। और इसलिए, कुछ भी जो परमेश्वर के पवित्र स्वभाव के विपरीत है उसकी व्यवस्था का उल्लंघन है। सुनिए कैसे याकूब इसे याकूब 2:10-11 में लिखता है:

जो कोई सारी व्यवस्था का पालन करता है परन्तु एक ही बात में चूक जाए तो वह सब बातों मे दोषी ठहर चुका है। इसलिये कि जिस ने यह कहा, "कि तू व्यभिचार न करना," उसी ने यह भी कहा, "कि तू हत्या न करना" (याकूब 2:10-11)।

याकूब की सोच यूहन्ना के जैसे ही थी: अर्थात् प्रत्येक पवित्रशास्त्रीय व्यवस्था उसी परमेश्वर से आती है और वह हम से चाहता है कि हम परमेश्वर को पूरी तरह से प्रसन्न करें।

परमेश्वर स्वयं ही हमारे व्यवहार का अन्तिम मापदण्ड, और व्यवस्था उस मापदण्ड को हमें प्रगट करता है। व्यवस्था परमेश्वर को पूरी तरह से प्रगट करने के लिए लक्षित नहीं की गई है। कुल मिलाकर, परमेश्वर अनन्त, समझ से परे है – कोई शब्द उसका वर्णन पूरी तरह से नहीं कर सकते हैं। इसकी अपेक्षा, व्यवस्था मात्र उसके चरित्र को सारांशित करती है। उसके अनुरूप, हमारा दायित्व यह नहीं है कि हम उसे ही *करें* जिसे व्यवस्था स्पष्ट रूप से कह रही है। हमें परमेश्वर के सिद्ध चरित्र की पहचान में आने की पुष्टि करना है जैसा व्यवस्था वर्णन करती है। और जहाँ कहीं हम इसमें कम रह जाते हैं, हमारे पाप उचित रीति से इसे अधार्मिकता के रूप में वर्णन करते हैं।

पाप के अधर्मी चरित्र को देख लेने के पश्चात्, आइए हम उस विचार को भी देखें जो प्रेमरहित होने का है।

प्रेमरहित

जब आदम और हव्वा ने सबसे पहले परमेश्वर के विरूद्ध पाप किया, उन्होंने परमेश्वर और एक दूसरे के प्रति प्रेम की भयानक कमी को प्रदर्शित किया। और यही कुछ तब सत्य होता है जब हम पाप करते हैं। हमारा पाप परमेश्वर के प्रति और एक दूसरे मानव प्राणी के प्रति प्रेमरहित या मयारहित होना है।

अब, यह समझने के लिए *प्रेम*रहित होने का क्या अर्थ होता है, हमें इस बात की व्याख्या करनी चाहिए कि प्रेम करने का क्या अर्थ होता है। प्रेम के बारे में कई भिन्न अवधारणाएँ हैं। पवित्रशास्त्र पति और पत्नी के मध्य के प्रेम, परिवार और सदस्यों के मध्य के प्रेम, मित्रों के मध्य के प्रेम, न्याय और आदर्शों के प्रति प्रेम, और यहाँ तक कि भोजन के प्रति प्रेम के बारे में बोलता है। परन्तु जब यह प्रेमी परमेश्वर और मनुष्य के सदंर्भ में बात करता है, तो इसके मन में कुछ और ही बात होती है। यह वाचाई दायित्वों के प्रति हमारी निष्ठा का, और वाचा के कारण अन्यों के प्रति हमारी दयालुता से भरा हुए प्रेम है। यीशु के शब्दों को जो उसने यूहन्ना 14:15 में उसके शिष्यों से कहे के ऊपर सोचिए:

> **यदि तुम मुझ से प्रेम रखते हो, तो मेरी आज्ञाओं को मानोगे (यूहन्ना 14:15)।**

प्रेम उचित रीति से आज्ञाकारिता के रूप में केवल तब ही व्यक्त होता है जब हम जिसे प्रेम करते हैं उसका हमारे ऊपर अधिकार होता है। क्या आप एक बच्चे को अपने माता पिता से यह कहते हुए कल्पना कर सकते हैं, "यदि आप मुझे प्रेम करेंगे, तो आप मेरे आज्ञा का पालन करेंगे"? या क्या अपने किसी एक मित्र से यह ऐसा कहने की कल्पना कर सकते हैं? बिल्कुल भी नहीं। मित्र अपने मित्रों को उनकी आज्ञा पालन करने के लिए नहीं कह सकते हैं। और बच्चों को उनके अपने माता पिता के ऊपर अधिकार नहीं होता है। परन्तु यीशु अपने शिष्यों को एक बच्चे या एक मित्र के जैसे प्रेम करने के लिए नहीं कह रहा था। वह उन्हें अपना वाचाई राजा मानते हुए प्रेम करने के लिए कह रहा था। यूहन्ना इसी विचार को 1 यूहन्ना 5:3 में आकर्षित कर लेता है, जहाँ उसने ऐसे लिखा है:

> **क्योंकि परमेश्वर से प्रेम रखना यह है: कि हम उसकी आज्ञाओं को मानें (1 यूहन्ना 5:3)।**

और व्यवस्थाविवरण 6:5-6 में, परमेश्वर ने प्रेम और वाचाई निष्ठा को ऐसे सम्बन्धित किया है:

> **तू अपने परमेश्वर यहोवा से अपने सारे मन, और सारे जीव, और सारी शक्ति के साथ प्रेम रखना। और ये आज्ञाएँ जो मैं आज तुझ को सुनाता हूं वे तेरे मन में बनी रहें (व्यवस्थाविवरण 6:5-6)।**

इन दोनों संदर्भों में, हम सीखते हैं कि परमेश्वर के प्रेम की मूलभूत अभिव्यक्ति उसकी आज्ञाओं को हृदय से माने जाने वाली आज्ञाकारिता की मांग करती है।

> **मैं सोचता हूँ, कि परमेश्वर के लिए प्रेम, परमेश्वर के प्रति आज्ञाकारी होने के लिए प्रेरित करता है क्योंकि यदि वह मुझे प्रेम करता है और यदि मैं उसे वापस प्रेम देता हूँ, और मैं उस कीमत को भी समझता हूँ, जिसे उसने मेरे लिए मेरे बदले में अदा किया है, तो मैं उसके लिए कुछ भी करूँगा। मेरा यह सम्बन्ध कुछ मनुष्यों के साथ है। जैसे परमेश्वर करता है वैसा नहीं, परन्तु मेरी पत्नी के साथ है। मैं उसके लिए कुछ भी करूँगा जिसकी उसे मुझसे आवश्यकता है क्योंकि मैं जानता हूँ कि वह मुझसे प्रेम करती है। मैं बदले में उसे प्रेम वापस देता हूँ, परन्तु मैं उस कीमत को समझता हूँ जो उसने मुझसे विवाह करके मुझे प्रसन्न रखने के लिए, पवित्र रखने के लिए अदा की है, मुझे ऐसा व्यक्ति बनाने के लिए की जैसा परमेश्वर मुझसे**

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

चाहता है। और इसलिए, यह जानते हुए, मुझे ऐसा व्यक्ति बनने के लिए जबरदस्त प्रेरणा है जैसा होना चाहिए। और सच्चाई यह है, कि मैं सोचता हूँ कि यह ठीक वैसे ही कार्य करता है जैसा कि एक सम्बन्ध परमेश्वर-व्यक्ति के मध्य में होता है। हम वह सब कुछ करेंगे जब हम एक बार इस अदा की हुई कीमत और उस प्रेम के बारे में जान जाते हैं।

- डॉ. मॉट फ्रईडमैन

प्रेम नहीं चाहता कि उसके लिए उसकी केवल इस लिए आज्ञापालन करें क्योंकि वे उससे डरते हैं, या मात्र इसलिए क्योंकि वे पुरस्कार पाना चाहते हैं। इसकी अपेक्षा, वह उनसे आज्ञापालन इसलिए चाहता है क्योंकि वे उसे सच्च में आदर देते हैं, क्योंकि वे उसकी कृपालुता के लिए धन्यवादी हैं, क्योंकि वे उसकी वाचा के प्रति निष्टावान हैं, और क्योंकि वे अपने हृदयों में उसे और उसकी व्यवस्था को संभाले रहते हैं। इसलिए ही पवित्रशास्त्र इतना अधिक परमेश्वर की वाचा को प्रेम के संदर्भ में बात करता है। उदाहरण के लिए, व्यवस्थाविवरण 7:9-13 के इन शब्दों को सुनिए:

वह विश्वासयोग्य ईश्वर है; और जो उस से प्रेम रखते और उसकी आज्ञाएँ मानते हैं उनके साथ वह हज़ार पीढ़ी तक अपनी वाचा का पालन करता, और उन पर करूणा करता रहता है...यदि तुम जो इन नियमों को सुनकर मानोगे और इन पर चलोगे, तो तेरा परमेश्वर यहोवा भी करूणामय वाचा को पालेगा जिसे उसने तेरे पूर्वजों से शपथ खाकर बाँधी थी; और वह तुझ से प्रेम रखेगा, और तुझे आशीष देगा, और गिनती में बढ़ाएगा (व्यवस्थाविवरण 7:9-13)।

इस प्रसंग में, दोनों अर्थात् उसके लोगों के लिए परमेश्वर का प्रेम, और उसके प्रति उसके लोगों का प्रेम, वाचा के प्रति विश्वासयोग्य रहने के संदर्भों में वर्णित किया गया है।

यही कुछ यीशु के मन में था जब उसने मत्ती 22:34-40 और मरकुस 12:28-31 में व्यवस्था की बड़ी आज्ञाओं के बारे में बातें की। उन संदर्भों में, यीशु का एक फ़रीसी के साथ विचार विमर्श चल रहा है जो व्यवस्था का विशेषज्ञ था। और फ़रीसी ने यीशु की समझ की जाँच करने के लिए एक प्रश्न उसके सामने रख दिया कि कैसे व्यवस्था की आज्ञाओं को दूसरों के साथ सम्बन्धित करना चाहिए। विशेषकर, उसने यीशु को व्यवस्था की सबसे महत्वपूर्ण या बड़ी आज्ञा के बारे में पूछा। और यीशु ने व्यवस्थाविवरण 6:5, 6 और लैव्यव्यवस्था 19:18 की उदधृत किया। सुनिए यीशु ने मत्ती 22:37-40 में क्या कहा:

"तू परमेश्वर अपने प्रभु से अपने सारे मन और अपने सारे प्राण और अपनी सारी बुद्धि के साथ प्रेम रख।" बड़ी और मुख्य आज्ञा तो यही है। और उसी के समान यह दूसरी भी है: "कि तू अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख।" ये ही दो आज्ञाएँ सारी व्यवस्था और भविष्यद्वक्ताओं का आधार हैं (मत्ती 22:37-40)।

सर्वप्रथम, स्मरण रखने के द्वारा, यह ध्यान दें कि यीशु ने इन व्यवस्थाओं को विस्तृत सारों के रूप में पहचान की जिनका लक्ष्य परमेश्वर की व्यवस्था के पूरे चरित्र को प्रतिबिम्बित करना था। दूसरा, ध्यान दें कि ये दोनों व्यवस्थाएँ प्रेम के संदर्भ में व्यक्त की गई हैं: परमेश्वर के लिए प्रेम और पड़ोसी के लिए प्रेम।

पौलुस ने इसी तरह के कथनों को रोमियों 13:9 और गलातियों 5:14 में दिया है, जहाँ उसने कहा है कि पूरी व्यवस्था को पड़ोसी से प्रेम करने में सारांशित किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, परमेश्वर के लिए प्रेम और पड़ोसी के लिए प्रेम व्यवस्था के दो पहलूओं से कहीं अधिक हैं। इसकी अपेक्षा, इन दोनों आज्ञाओं में से प्रत्येक में पूरी व्यवस्था को सारांशित किया जा सकता है। परमेश्वर के लिए प्रेम पूरी व्यवस्था का एक सार है, और पड़ोसी के लिए प्रेम पूरी व्यवस्था का एक और सार है।

इसलिए, यह बताता है कि पाप मूलभूत रूप से दोनों अर्थात् परमेश्वर और पड़ोसी के प्रति मयारहित या प्रेमरहित होना है। इससे यह पता चलता है, कि प्रत्येक पाप परमेश्वर के प्रति प्रेमरहित होता है क्योंकि यह दिखाता है कि वह हमारे हृदयों का सर्वाधिक समर्पण नहीं है। प्रत्येक पाप उसके चरित्र को अस्वीकार करना है, उसके अधिकार के विरूद्ध विद्रोह है, और उसकी वाचा का उल्लंघन है। और साथ ही प्रत्येक पाप अपने पड़ोसी के

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

प्रति प्रेमरहित होना भी है। यह अपने पड़ोसी के प्रति परमेश्वर के चरित्र और अधिकार के प्रतिबिम्ब को अस्वीकृत कर देता है। और यह अपने पड़ोसी की भलाई को परमेश्वर की वाचा की आशीषों के माध्यम से चाहत करने में असफल हो जाता है।

मैं अपने विद्यार्थियों को शिक्षा देता हूँ कि वे तब तक उत्तीर्ण नहीं होंगे जब तक वे "धर्मविज्ञान 101," में सफल नहीं होते और तब मैं उन्हें धर्मविज्ञान 101 को मात्र इस कथन में बताता हूँ: परमेश्वर परमेश्वर है और आप परमेश्वर नहीं है। पाप कहता है, "कि मैं परमेश्वर हूँ।" पाप परमेश्वर, परमेश्वर की महिमा, परमेश्वर के सम्मान, परमेश्वर की इच्छा, परमेश्वर के राज्य को अधिकारहीन कर देता है, और *अपनी* महिमा, *अपने* सम्मान, *अपनी* इच्छा, *अपने* राज्य के ऊपर ध्यान केन्द्रित करता है। और इसलिए, धर्मविज्ञान 101 से आगे बढ़ते हुए, मेरे पास धर्मविज्ञान 102 है: क्योंकि परमेश्वर परमेश्वर है, इसलिए आपको अपने परमेश्वर प्रभु को अपने सारे मन और अपने सारे प्राण और अपनी सारी बुद्धि के साथ प्रेम करना चाहिए और क्योंकि आप परमेश्वर नहीं हैं, इसलिए संसार आपके चारों ओर नहीं घुमता है। आपको अपने पड़ोसी को अपने जैसा प्रेम करना चाहिए। और इसलिए, हाँ पाप *मूलभूत* रूप से दूसरों को प्रेम न करना है। यह स्वयं को प्रेम करना है; यह स्वयं पर ध्यान केन्द्रित करना है। और इसलिए परमेश्वर के प्रति सिद्ध आज्ञाकारिता – अर्थात्, पाप न करना – प्रेम करना है। यह परमेश्वर को प्रेम करना और यह दूसरों को प्रेम करना है।

- डॉ. ऐलॉन हॉल्टबर्ग

पाप के प्रेमरहित चरित्र को मनुष्य के पाप में पतित होने के संदर्भ में सोचें। सर्प ने हव्वा को यह कहते हुए परीक्षा में डाल दिया कि परमेश्वर निषेध किए हुए फल के बारे में झूठ बोल रहा था। उसने कहा कि यदि वह इसे खा लेती है, तो न केवल वह नहीं मरेगी, अपितु परमेश्वर के सदृश हो जाएगी। उसके द्वारा खा लेने के पश्चात्, आदम भी उसी झूठ से कायल हो गया, इसलिए उसने भी उसमें से कुछ खा लिया।

अब, कैसे आदम और हव्वा परमेश्वर और अपने पड़ोसी के प्रति प्रेमरहित हो गए? वे परमेश्वर के प्रति उसकी वाचाई व्यवस्था के विरूद्ध विद्रोही होने, और परमेश्वर की सच्चाई के ऊपर सर्प के झूठों के ऊपर भरोसा करने के द्वारा हुए। हव्वा आदम के प्रति उसे पाप करने की परीक्षा में डालते हुए, उसमें परमेश्वर के स्वरूप के होने के साथ असन्तुष्ट होने के द्वारा, और परमेश्वर की व्यवस्था के प्रति उसकी आज्ञाकारिता के माध्यम से उसकी भलाई की लालसा करने में असफल होने के द्वारा प्रेमरहित हो गई। इसी तरह से, आदम हव्वा के प्रति प्रेमरहित जब उसे धोखा मिला तब उसे सही समझ देकर सुधारने में असफल होने के द्वारा, स्वयं और उसमें परमेश्वर के स्वरूप के साथ असन्तुष्ट होने की पुष्टि करते हुए होने के द्वारा, और एक ऐसे पाप को करने के द्वारा हो गया जिसके उसके ऊपर नकारात्मक परिणाम थे।

और कुछ ऐसा ही सभी मनुष्यों के पाप के साथ सत्य है। आदम और हव्वा के प्रथम पाप के ठीक जैसे ही, प्रत्येक मनुष्य का पाप के ऊपर परमेश्वर की सच्चाई का इन्कार किए जाने से, उसकी कृपालता के ऊपर अविश्वास व्यक्त करने से, और उसके अधिकार के विरोध में विद्रोह करने से परमेश्वर का यही दृष्टिकोण होता है। संक्षिप्त में कहना, प्रत्येक मानवीय पाप परमेश्वर के प्रति उचित वाचाई प्रेम को प्रदर्शित करने के लिए असफल हो जाता है। और प्रत्येक मानवीय पाप अपने पड़ोसी के प्रति उचित वाचाई प्रेम को प्रदर्शित करने में भी असफल हो जाता है। चाहे हम उनके प्रति परोक्ष या अपरोक्ष पाप ही क्यों न करें, और चाहे हम हमारे कार्यों या हमारी निष्क्रिया से ही पाप क्यों न करें, हमारे पाप सदैव दूसरे लोगों को नुक्सान पहुँचाते हैं। यह उनमें वास कर रहे परमेश्वर के स्वरूप का अनादर करता है। यह उनकी भलाई की चाहत में असफल हो जाता है। और यह उनके जीवनों को पाप की भ्रष्टता और परिणामों से हानि पहुँचाता है।

क्या आपकी मुलाकात ऐसे मसीहियों से हुई है जो यह विश्वास करते हैं कि वे परमेश्वर की व्यवस्था को, तब तक तोड़ सकते हैं, जब तक वे प्रेम के कारण प्रेरित हैं? या ऐसे लोगों से जो यह विश्वास करते हैं यदि वे परमेश्वर की व्यवस्था को थामे रहते, तो यह बात कोई मायने नहीं रखती है कि वे किसी दूसरे को प्रेम करते हैं या

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

नहीं? इस तरह के दोनों लोग गलत हैं। हम परमेश्वर और अपने पड़ोसी को केवल तब प्रेम करते हैं जब हम उनके मूल्य को जानते हैं जैसा परमेश्वर की वाचा मांग करती है। और हमारे कार्य परमेश्वर की व्यवस्था को तब ही थामते हैं जब वे वाचाई प्रेम के द्वारा प्रेरित होते हैं। यही वह बात है जो पाप करने को इतना आसान बना देता है। पाप का इससे कोई सरोकार नहीं है कि किस आधे हिस्से को हमने अन्देखा कर दिया है। चाहे हम अधर्मी या प्रेमरहित हैं, पाप विजय प्राप्त करता है। इसलिए ही विश्वासियों के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वह पाप के चरित्र को समझें। क्योंकि जब हम समझ जाते हैं, तो हम इससे बचने के लिए सर्वोत्तम तरीके से सुसज्जित होते हैं, और हम हमारे मिलने वाले उद्धार के लिए और अधिक सराहनीय होते हैं।

पाप के श्राप के ऊपर इस अध्याय में अभी तक हमने, मानवीय पाप की उत्पत्ति की खोज की है, और पाप के अनिवार्य चरित्र का वर्णन किया है। अब हम हमारे तीसरे मुख्य विषय: पाप के परिणामों को सम्बोधित करने के लिए तैयार हैं।

परिणाम

पारम्परिक विधिवत् धर्मविज्ञान में, शब्द "मूल पाप" का संकेत मनुष्य के पहले पाप के परिणाम की ओर किया है। भिन्न धर्मशास्त्रियों ने भिन्न तरीकों से मूल पाप की व्याख्या का विवरण दिया है। परन्तु प्रत्येक घटना में, ध्यान निम्न बात के ऊपर ही केन्द्रित रहा है:

वह परिस्थिति जिसमें आदम की प्राकृतिक सन्तान आदम के पाप में गिरने के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई।

आदम की अनाज्ञाकारिता ने प्रत्येक मनुष्य के ऊपर नकारात्मक प्रभाव को डाल दिया जो प्राकृतिक रूप से उसमें से निकल कर आगे आई। केवल यीशु ही इस मूल पाप से बचा था।

> **संक्षेप में, मूल पाप, ऐसा पाप है, जिसे एक व्यक्ति ने हृदय की गहराई में उसके जन्म से प्राप्त किया है। और एक व्यक्ति इसे टाल नहीं सकता है। प्रत्येक उत्पन्न व्यक्ति को इसे स्वीकार करना चाहिए क्योंकि लोग पापी वंशावली में से उत्पन्न हुए हैं। मैं इसके लिए एक उदाहरण दूँगा: एक शेर के लिए यह संभव नहीं है कि वह एक मेम्ने को जन्म दे, और एक पापी मनुष्य के लिए सम्भव नहीं है, जो आदम का वंशज् है, कि वह एक ऐसे पवित्र व्यक्ति को जन्म दे, जो व्यक्ति परमेश्वर की दृष्टि में सही हो। यह पाप ही है जो पहले से वास कर रहा है। यद्यपि हम इसे हमारे विचारों से नहीं करते हैं, इसे अपने वचन से नहीं करते हैं, इसे हमारे कर्मों से नहीं करते हैं, तौभी यह वहाँ पहले से ही अस्तित्व में है। और हमारे मध्य में ऐसा कोई नहीं है जो इससे स्वयं को बचा सकता हो। इसलिए ही इसे "मूल पाप" कह कर पुकारा जाता है। जैसे दाऊद ने भजन संहिता 51 में कहा है, "देख, मैं अधर्म के साथ उत्पन्न हुआ, और पाप के साथ अपनी माता के गर्भ में पड़ा।"**
>
> **– योहनेस प्राप्टोवार्सो, पी एच डी., अनुवादित**

इस अध्याय में हमारे प्रयोजनों के लिए, हम पाप में मनुष्य के पतन के तीन परिणामों: भ्रष्टता, अलगाव और मृत्यु के ऊपर ध्यान केन्द्रित करेंगे। आइए भ्रष्टता के साथ आरम्भ करें।

भ्रष्टता

आपको स्मरण होगा की जब आदम और हव्वा ने भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष का फल तोड़ कर खा लिया, तो इसने उन्हें उनकी दुगर्ति में परिवर्तित कर दिया। इससे पहले, हमने उल्लेख किया, हिप्पो के बिशप, अगस्तीन ने मनुष्य के मूल, निष्पाप परिस्थिति को *पौसी नॉन पिक्कारे* जिसका अर्थ मनुष्य की "पाप न करने की क्षमता" के शब्दों में व्याख्या की थी। परन्तु आदम और हव्वा के पाप करने के पश्चात्, उन्होंने इस क्षमता को खो दिया, और पाप करने की क्षमता को ही प्राप्त कर लिया। अगस्तीन उनकी नई परिस्थिति को *नॉन पौसी नॉन पिक्कारे*– पाप न करने की *अक्षमता* कह कर पुकारता है। जिस भ्रष्टता को आदम और हव्वा ने सामना किया उसने परमेश्वर को प्रसन्न करने और उसकी आशीषों को प्राप्त करने की उनकी योग्यता को हटा दिया और उन्हें केवल पाप करने और परमेश्वर के शापों को प्राप्त करने की क्षमता के साथ छोड़ दिया।

अब, हम उत्पत्ति 3:12, 13 में देखते हैं कि चाहे वे कितने भी अपूर्ण ही क्यों न थे आदम और हव्वा ने उनके पाप को अंगीकार कर लिया था। और इसके पश्चात् आने वाले वचनों में, परमेश्वर उनके प्रति उदार रहा। वह उनके पापों के कारण उन्हें वही पर तुरन्त खत्म कर सकता था। परन्तु उसने ऐसा नहीं किया। इसकी अपेक्षा, उसने उन पर दया को दिखाया। और उत्पत्ति 3:15 में, यहाँ तक कि उसने उन्हें उनके पाप और इसके प्रभावों से बचाने के लिए एक उद्धारक को भेजने की प्रतिज्ञा की। विश्वास और पश्चात् के अर्थों में जिसे आदम और हव्वा ने व्यक्त किया था, परमेश्वर ने उनकी आत्माओं को नवीकृत किया और पाप से बचने की इनकी क्षमता को पुनःस्थापित किया।

दुर्भाग्य से, उनकी व्यक्तिगत् पुनर्स्थापना उनकी प्राकृतिक सन्तानों तक विस्तारित नहीं हुई। बाकी की बची हुई मानव जाति पाप न करने की अक्षमता के साथ उत्पन्न होने के लिए अभिशप्त हो गई। यीशु और पौलुस ने नैतिक भ्रष्टता की इस अवस्था की तुलना यूहन्ना 8:31-44 और रोमियों 6:6-20 जैसे स्थानों में पाप के दास होने से किया है। और हम भ्रष्टता की इस अवस्था में तब तक रहेंगे जब तक परमेश्वर हमें बचा नहीं लेता, ठीक वैसे ही जैसे उसने आदम और हव्वा को बचाया था।

लूका 6:43-45 में, यीशु ने हमारी भ्रष्ट अवस्था की तुलना एक बुरे वृक्ष के साथ की है जो केवल बुरे फल को ही उत्पन्न कर सकता है। उसके कहने का यह अर्थ नहीं कि उद्धार रहित पाप में गिरा हुआ मनुष्य *बाह्य* रूप से कभी भी कुछ अच्छा नहीं करता है। वह अभी भी अपने बच्चों की देखभाल करता, अभी भी नागरिक कानूनों का सम्मान और ऐसी बातों को करता है। परन्तु पाप की भ्रष्टता उन्हें परमेश्वर की व्यवस्था का सम्मान के साथ उपयोग करने में या परमेश्वर और पड़ोसी के लिए वाचाई प्रेम से भर रहने के लिए अयोग्य कर देती है। और इसलिए, सब कुछ जिसे वह करता है वह पाप से दागी है। जैसे पौलुस रोमियों 8:6-8 में कहता है:

> **शरीर पर मन लगाना तो मृत्यु है... क्योंकि शरीर पर मन लगाना तो परमेश्वर से बैर रखना है, क्योंकि न तो परमेश्वर की व्यवस्था के अधीन है, और न हो सकता है। और जो शारीरिक दशा में है, वे परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते (रोमियों 8:6-8)।**

दुर्भाग्य से पतित मानव जाति के लिए, हमारी भ्रष्टता पाप से बचने की हमारी अक्षमता तक ही सीमित नहीं है। यह मानवीय स्वभाव के प्रत्येक पहलू तक विस्तारित है। भिन्न धर्मवैज्ञानिक परम्पराएँ भिन्न तरीकों से भ्रष्टता के इस विस्तार को समझते हैं। परन्तु हम सभी इस बात से सहमत हो सकते हैं कि हमारे मानवीय स्वभाव का प्रत्येक इकाई प्रभावित है, जिसमें हमारे शरीरों और प्राणों का प्रत्येक अंग सम्मिलित है। उदाहरण के लिए, हमारे शरीर दुख उठाते और मरते हैं, ठीक वैसे ही जैसे परमेश्वर ने उत्पत्ति 3:16-19 में कहा था। हमारे मन समझ नहीं पाते हैं, जैसे पौलुस ने रोमियों 3:11 में संकेत दिया है। और हमारे हृदय पाप की लालसा करते हैं, जैसे यूहन्ना ने 1 यूहन्ना 2:16 में उद्धत किया है।

पाप हमारे जीवन में व्यापक रूप से फैला हुआ है। यह पतित मनुष्य के प्रत्येक अंग – हमारे शरीर, हमारे प्राण, हमारे मन और हमारी इच्छाओं, हमारे विचारों और बाकी अन्य सब कुछ को भ्रष्ट करता है। परिणाम स्वरूप, यह उस सब कुछ को भी भ्रष्ट कर देता है जो हमारे अस्तित्व में से बाहर निकल कर आता है – जैसे वह सब कुछ जो हम सोचते, करते और महसूस करते हैं। जब हम मसीह में विश्वास करते हैं, तब परमेश्वर हमें उन तरीकों में नवीकृत करता है जिससे इन सभी क्षेत्रों में उसे प्रसन्न करने की हमारी क्षमता की पुनर्स्थापना होती है। परन्तु वे जो अभी तक बचाए हुए नहीं है, वे जो कुछ करते हैं उसमें पाप स्वयं को व्यक्त करता है।

उन तीन तरीकों के ऊपर पापपूर्ण अवधारणाएँ जिन्हें हम मानते हैं, से आरम्भ करते हुए विचार करें, जिनके ऊपर पवित्रशास्त्र बात करता है जो हम में विश्वास में आने से पहले भ्रष्टता को उत्पन्न करते थे।

धारणाएँ

हव्वा की अवधाराणाएँ उस समय भ्रष्ट हो गई थीं जब उसने परमेश्वर के प्रयोजनों और निषेध फल के प्रभावों के बारे में सर्प के झूठों के ऊपर विश्वास किया था। और इसी तरह आदम की अवधाराणाएँ तब भ्रष्ट हो गई

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

जब उसने यह निर्धारित किया कि फल खाने योग्य है। परन्तु इन सब भ्रष्टताओं में सबसे भयावह बात यह थी कि वे परमेश्वर के शाप के माध्यम से आगे आने वाली सारी मानव जाति को दे दी गई।

जैसा कि हमने पिछले किसी एक अध्याय में देखा, पाप ने मनुष्य की वैचारिक सोच की क्षमता को हानि पहुँचाया, और हमें झूठे विचारों के सत्य होने के विश्वास में निरूत्तर कर दिया। सभोपदेशक 9:3 और यिर्मयाह 17:9 कहता है कि पाप हम सभों को कुछ तरीकों से पागल कर देता है। हम उन बातों को मूल्यहीन समझते हैं जिन्हें परमेश्वर मूल्य देता है, और हम स्वयं से ही बुराई करते हैं। व्यवस्थाविवरण 29:2-4 कहता है कि पाप से भरे हुए मनों को परमेश्वर के आश्चर्यकर्मों की विशेषता को आत्मसात् करने में परेशानी होती हैं। और रोमियों 8:43-47 शिक्षा देता है कि पाप हमें झूठों के ऊपर विश्वास करने का कारण बनता और सत्य को स्वीकार करने से बचने के लिए रोकता है। इफिसियों 4:17-18 पाप के प्रभाव को इस तरीके से वर्णित करता है:

> **अन्यजातीय लोग अपने मन की अनर्थ रीति पर [चलते] हैं, तुम अब से फिर ऐसे न चलो। क्योंकि उनकी बुद्धि अन्धेरी हो गई है और उस अज्ञानता के कारण जो उनमें है और उनके मन की कठोरता के कारण वे परमेश्वर के जीवन से अलग किए हुए हैं (इफिसियों 4:17-18)।**

जब भी हम सत्य में विश्वास करने में असफल हो जाते हैं, तो ऐसा इसलिए होता है क्योंकि पाप ने हमारी अवधारणाओं को भ्रष्ट कर दिया है। इससे भी बुरी बात यह है, कि हमारी बहुत सी झूठी अवधारणाएँ स्वयं में पाप से भरी हुई हैं। वे अवधारणाएँ जिन्हें हमारे लिए आत्मसात् करने में बहुत अधिक कठिनाई हो, या उन बातों से अन्जान होना जिन्हें हमें सीखने के लिए अवसर नहीं मिला, को गलत समझना हमारे लिए पाप से भरा हुआ नहीं है। परन्तु झूठे धर्मसिद्धान्तों और बाइबल रहित तरीकों में सोचते हुए उनकी पुष्टि करना हमारे लिए पाप से *भरा* हुआ है। इसलिए ही 1 तीमुथियुस 6:3-5 में, पौलुस ने पाप के झूठे शिक्षकों को उनकी आपराधिक अज्ञानता और भ्रष्ट मनों को दोषी ठहराया है। झूठे धर्मसिद्धान्त और गलत विचार ऐसे झूठे हैं जो परमेश्वर की सच्चाई को अस्पष्ट कर देते हैं, और जो हमें आगे पाप करने का नेतृत्व प्रदान करते हैं।

> **परमेश्वर परमेश्वर है और वह सही और उचित तरीके से जानने के योग्य है। उसे जानने के लिए हमें उसी से ही पता लगाना होगा जो कि सही है और जिसके पास सही धर्मसिद्धान्त हैं क्योंकि सही धर्मसिद्धान्त वर्णित करते हैं कि परमेश्वर कौन है और परमेश्वर के साथ हमारा सम्बन्ध क्या है। इसलिए, सर्वप्रथम, परमेश्वर हमारे सर्वोत्त्म सोच और उसके प्रति हमारे विचारों को जितना अधिक *सही* हो पाने के योग्य है। और इसलिए, सही धर्मसिद्धान्त महत्वपूर्ण हैं क्योंकि यह परमेश्वर को सम्मान देते हैं। यह उसका आदर करते हैं। हम उसे वैसे ही जानना चाहते हैं जैसा वह सच्च में है। हम उसके बारे में सच्चाई को जानना चाहते हैं जिसे उसने हम पर प्रकाशित किया है। इसमें कोई सन्देह नहीं है, कि यही पवित्रशास्त्र का प्रयोजन है, जिसे हम जान सकते हैं। दूसरा, नया नियम बड़ी दृढ़ता के साथ झूठे धर्मसिद्धान्तों के विरोध में बोलता है क्योंकि यह झूठे जीवन के मार्ग की ओर ले चलते हैं। यह पाप की ओर ले चलते हैं, कि परमेश्वर की ओर से मुड़ जाएँ। जब हम परमेश्वर को सही तरीके से समझ जाते हैं, जब हमारे पास परमेश्वर का एक अनैतिक दृष्टिकोण होता है, तो हम एक अनैतिक जीवन को यापन करने वाले होते हैं। हम उसकी सेवा नहीं करने वाले होते जैसे कि वह हमसे सेवा को चाहता है। इसलिए नया नियम बड़ी दृढ़ता के साथ झूठे धर्मसिद्धान्तों की विरोध में बोलता है।**
>
> **- डॉ गॉरिथ कोकरिल**

हमारी भ्रष्टता का दूसरा परिणाम उस पाप से भरे हुए व्यवहारों से है जिसे में प्रगट करते हैं।

व्यवहार

आदम और हव्वा का व्यवहार कदाचित् उनके पाप का सबसे स्पष्ट पहलू था: कि उन्होंने निषेध फल को खा लिया। और इस पाप ने उनके व्यवहारिक पापों के लिए नमूने का कार्य किया जिसने तब से मानव जाति इस पाप से ग्रस्त है। उस समय के पश्चात्, जैसा कि हम उत्पत्ति 6:5 में पढ़ते हैं, परमेश्वर मनुष्य के पाप से भरे हुए

व्यवहार के कारण इतना अधिक क्रोधित था कि उसने पूरी मानवजाति को बाढ़ के द्वारा, मात्र नूह और उसके परिवार को पुन: इस संसार को भरने के लिए छोड़ते हुए नाश कर दिया।

दुर्भाग्य से, मानवजाति ने इस समय से लेकर अभी तक कुछ ज्यादा बेहतर नहीं किया है। हम अभी भी सभी तरह के व्यवहारिक पापों को करते हैं। सच्चाई तो यह है कि रोमियों 1 में, पौलुस तर्क देता है कि एक कारण कि क्यों हम पाप करते हैं वह यह है कि परमेश्वर ने हमें पापपूर्ण अभिलाषाओं के हाथों में छोड़ दिया है। इसी अध्याय में, पौलुस व्यवहार के डरावने विवरण को भी उपलब्ध करता है जो अब हमारे उद्धार रहित, पाप में पतित परिस्थिति का चित्रण करते हैं। सुनिए पौलुस रोमियों 1:29-32 में क्या लिखता है:

> **इसलिये वे सब प्रकार के अधर्म, और दुष्टता, और लोभ, और बैरभाव, से भर गए; और डाह, और हत्या, और झगड़े, और छल, और ईर्ष्या से भरपूर हो गए, और चुगलखोर, बदनाम करनेवाले, परमेश्वर से घृणा करने वाले, दूसरों का अनादर करनेवाले, अभिमानी, डींगमार, बुरी- बुरी बातों के बनानेवाले, माता पिता की आज्ञा न माननेवाले, निर्बुद्धि, विश्वासघाती, मयारहित और निर्दय हो गए। वे तो परमेश्वर की यह विधि जानते हैं, कि ऐसे ऐसे काम करनेवाले मृत्यु के दण्ड के योग्य हैं, तौभी न केवल आप ही ऐसे काम करते हैं, बरन करनेवालों से प्रसन्न भी होते हैं (रोमियों 1:29-32)।**

> **आप जानते हैं, कि जब बीसवीं सदी का आरम्भ हुआ, तब संसार में बहुत ही ज्यादा आशावाद, विशेषकर पश्चिमी संसार में, ऐसा प्रोदैयोगिकीय प्रगति, शिक्षा की व्यापक उपलब्धता, सभी तरह के आविष्कारों, तकनीकी उन्नति और ऐसी ही अन्य बातों के कारण था, वहाँ पर उनमें दार्शनिक और सामाजिक वैज्ञानिक और यहाँ तक उदारवादी धर्मशास्त्री भी थे, वहाँ पर आशावाद का बहुत बड़ा वातावरण था कि बींसवी सदी शान्ति की एक ऐसी सदी होगी जिसमें और अधिक युद्ध नहीं होंगे। बींसवी सदी एक ऐसी सदी हुई है जिसमें मानवीय तर्क शासन करेगा और तर्कसंगत प्राणी एक दूसरे की हत्या नहीं करेंगे। इस तरह से, इस विशाल अपेक्षा के साथ कि हम एक ऐसी सदी में पहुँच रहे हैं जिसमें शान्ति होगी, आप देखते हैं, इस तरह की बात में एक समस्या थी... और वह समस्या मार्क्सवाद की थी। इसके पास आशावादी मानव विज्ञान था जिसका अन्त सामाजिक विपत्ति में हुआ क्योंकि इसके पास पाप का धर्मसिद्धान्त नहीं था। और क्या घटित हुआ? आपको प्रथम विश्व युद्ध मिला। आपको बोल्शेविक क्रांति मिली। बाद में आपको यहूदियों का सर्व-नाश, द्वितीय विश्व युद्ध, हिटलर, नाजीवाद, और हम सूची को आगे बढ़ाते जा सकते हैं, मिलता चला गया। और इस कारण, परिणामस्वरूप, संक्षेप में कहना, वींसवी सदी में ही, लगभग 11.28 करोड़ लोग युद्ध में ही मारे गए। मैं केवल युद्ध – जिसमें सामान्य नागरिक और सिपाही मारे गए की बात कर रहा हूँ, जहाँ तक आंकड़े हमें गणना करने की अनुमति देते हैं। यह पिछली चार सदियों की गिनती को इकट्ठा करके जोड़ने से चार गुना ज्यादा है। यह हमें क्या कहता है? यह कि न केवल सामाजिक परिस्थियाँ अपितु और कुछ गलत है। सभी तरह के ज्ञान, विज्ञान की प्रगति और सभ्यता के विकास के साथ, मानव जाति के साथ मूलभूत रूप से कुछ गलत है। और इसी को हम - मसीही – विश्वासी "पाप" कह कर पुकार रहे हैं। अब यह संचार माध्यम, शैक्षणिक विद्यालय और ऐसे ही स्थानों में एक अधिक लोकप्रिय शब्द नहीं है, तौभी रेनहोल्ड नेऊबर ने ऐसे कहा, पाप के लिए मसीही धर्मसिद्धान्त सभी धर्मसिद्धान्तों में एक *सबसे कम* लोकप्रिय धर्मसिद्धान्त है, और तौभी ऐसा है कि जिसके हमें हर स्थान में सबसे अधिक अनुभवजन्य प्रमाण मिलते हैं।**
>
> **- डॉ. पीटर कूज़मिक्क**

हमारी भ्रष्टता के तीसरे प्रमाण के रूप में हम हमारी पाप से भरी हुई भावनाओं का उल्लेख करेंगे।

भावनाएँ

जैसा कि हमने देखा है, परमेश्वर की व्यवस्था की पहली और दूसरी सबसे बड़ी आज्ञाएँ दोनों ही प्रेम की आज्ञाएँ हैं: प्रथम, परमेश्वर को प्रेम करना; और दूसरी अपने पड़ोसी से प्रेम करना। और इसमें कोई सन्देह नहीं है, कम से कम आंशिक रूप से प्रेम एक भावना है। यह वह प्रेरणा है जो हमें हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आज्ञाकारिता के लिए चलित करता है। इसलिए, यह हमें आश्चर्य में नहीं डालना चाहिए कि पाप से भरी हुई भ्रष्टता हमारी भावनाओं को भी प्रभावित करती हुई, हमें परमेश्वर और हमारे पड़ोसी से जैसा प्रेम करना चाहिए उसे करने में रोकती है, और हमें दूसरी धर्मी भावनाओं को प्रदर्शित करने से रोकती हैं जो प्रेम से निकल कर बाहर आते हैं।

आदम और हव्वा की भ्रष्टता की भावनाएँ उनके स्वयं के पाप में, अपने तुरन्त प्रभाव और उनके चिरस्थाई श्राप के साथ सम्मिलित थीं। उदाहरण के लिए, उत्पत्ति 3:6 में, हव्वा ने उस बुद्धि को प्राप्त करना चाहा जिसे निषेधित फल ने देने का प्रस्ताव दिया था। वचन 7-10 में, आदम और हव्वा ने अपने नंगेपन की शर्मिंदगी को महसूस किया। और वचन 16 में, परमेश्वर ने उनकी भावनाओं और इच्छाओं को इस तरीके से शापित किया जो उनके वैवाहिक सम्बन्धों को प्रभावित करेगा।

और ऐसा ही कुछ प्रत्येक मानवीय प्राणी की भावनाओं के साथ पाप की भ्रष्टता के प्रति सत्य है। हम सभी लालच, वासना, घमण्ड, घृणा, अधार्मिकता से भरे हुए क्रोध और सभी तरह के अन्य पाप से भरी हुई भावनाओं के साथ संघर्ष करते हैं। ऐसा ही कुछ यीशु ने मरकुस 7:21-22 में कहा था :

> **क्योंकि भीतर से, अर्थात् मनुष्य मे मन से, बुरी बुरी चिन्ता व्यभिचार, चोरी, हत्या, परस्त्रीगमन, लोभ, दुष्टता, छल, लुचपन, कुदृष्टि, निन्दा, अभिमान, और मूर्खता निकलती हैं (मरकुस 7:21-22)।**

इससे पहले कि हम कोई कार्य करें, हमारी पापपूर्ण भावनाएँ और इच्छाएँ हमें पापपूर्ण विचारों और व्यवहारों की ओर खींच लेते हैं। याकूब इसे याकूब 1:14-15 में इस तरीके से लिखता है:

> **परन्तु प्रत्येक व्यक्ति अपनी ही अभिलाषा में खिंचकर, और फँसकर परीक्षा में पड़ता है। फिर अभिलाषा गर्भवती होकर पाप को जनती है और पाप जब बढ़ जाता है तो मृत्यु को उत्पन्न करता है (याकूब 1:14-15)।**

हमारे पापपूर्ण स्वभाव में, परमेश्वर की व्यवस्था के प्रति यहाँ तक कि बाह्य रूप से आज्ञाकारिता भी असम्भव है। परन्तु जब हम हमारी भावनात्मक भ्रष्टता, और परमेश्वर और हमारे पड़ोसी को जैसा करना चाहिए वैसे प्रेम करने की अक्षमता के ऊपर विचार करते हैं, तो यह स्पष्ट हो जाता है, कि उसके बचाए हुए अनुग्रह को छोड़कर, हमारे पास परमेश्वर को प्रसन्न करने की कोई क्षमता नहीं है।

मनुष्य के पाप में पतित हो जाने के भयावह परिणामस्वरूपों में एक व्यापक भ्रष्टता को देख लेने के पश्चात, आइए हम परमेश्वर और दूसरे मनुष्यों से हमारी अलगाव की खोज करें।

अलगाव

> **पाप के प्रभाव के बारे में अधिक बोलना वास्तव में असम्भव है। सर्वप्रथम, पाप की मजदूरी मृत्यु है। मृत्यु पाप के कारण मनुष्य के अनुभव में प्रवेश कर गई। हम सभी पाप के कारण मरेंगे। दूसरा, हमें पाप के कारण परमेश्वर से अलग कर दिया गया है। हमारे सम्बन्धों में दरार है और हमें हमारी पापपूर्णता के कारण उसके साथ सम्पर्क स्थापित करने का बिल्कुल भी कोई अधिकार नहीं है। और तीसरा, पाप के कारण एक दूसरे के साथ हमारे सम्बन्धों में दरार है, यह खण्डित और टूटा हुआ है। क्योंकि हम सर्वप्रथम अपनी आवश्यकताओं को चुनते हैं और दूसरे से आगे स्वयं को रखते हैं और घमण्ड और स्वार्थ और धोखे से फूल कर कुप्पा हो जाते हैं, हम पूर्ण सामंजस्यता में दूसरे के साथ इकट्ठा चलने में असफल हो जाते हैं। इसलिए, यह सब कुछ पाप के कारण सार्थक होने योग्य है।**
>
> **- डॉ. कोन्स्टंटाईन कैम्पबेल**

मनुष्य की रचना परमेश्वर के स्वरूप में उसकी संगति में होते हुए इस संसार के ऊपर शासन करने के लिए की गई थी। हमें वास्तव में अदन की वाटिका का विस्तार पूरी पृथ्वी के ऊपर करना था, ताकि सारी सृष्टि उसका पार्थिव राज्य बन जाए। और उस राज्य में, परमेश्वर हमारे साथ रहे और अपनी उपस्थिति को हमारे मध्य में

प्रदर्शित करे। और हमें वास्तव में एक एकीकृत जाति की तरह रहते हुए, सामूहिक और प्रेम से भरे हुए परमेश्वर के उप-प्रतिनिधि या अधीनस्थ राजाओं की तरह सृष्टि के ऊपर शासन करना था।

परन्तु पाप ने परमेश्वर के साथ हमारी संगति को तोड़ दिया, और एक दूसरे के साथ हमारे सम्बन्धों को हानि पहुँचाई। इसने आदम और हव्वा को अदन की वाटिका से परमेश्वर की उपस्थिति से बाहर कर दिया। उत्पत्ति 3:24 कहती है कि उसने यहाँ तक कि वाटिका के दरवाजे की सुरक्षा में स्वर्गदूतों का पहरा यह सुनिश्चित करने के लिए लगा दिया कि वे इसमें अन्दर वापस न घुस आएँ। परिणामस्वरूप, मनुष्य एक उजड़े हुए जंगल में परमेश्वर की उपस्थिति और सुरक्षा से दूर जीवन व्यतीत करने के लिए मजबूर है। और जैसा कि हम उत्पत्ति 4-6 में शिक्षा पाते हैं, कि मनुष्य शीघ्र ही जंगल में एक दूसरे के विरोध में हो गया। कैन ने अपने भाई हाबिल की हत्या कर दी, और ऐसे लोगों की पीढ़ियों का पिता बन गया, जो दुष्टता से एक दूसरे के साथ व्यवहार करते हैं। अन्ततः मनुष्य का एक दूसरे के प्रति दुर्व्यवहार इतना अधिक बढ़ गया कि परमेश्वर ने नूह के दिनों में पूरे संसार को बाढ़ से नष्ट कर दिया।

मनुष्य का परमेश्वर और एक दूसरे से दूर होना अर्थात् अलगाव इस भयावह तरीके से तब से चलता आ रहा है। हम अब और अधिक परमेश्वर की तुरन्त की उपस्थिति में नहीं चलते हैं जैसे आदम और हव्वा चलते थे; इसकी अपेक्षा हम घृणा करते और एक दूसरे के साथ युद्ध करते हैं। और झूठ, धोखा, घृणा, झगड़े और सभी तरह की सम्बन्धात्मक समस्याएँ शान्तिपूर्ण तरीके और सामूहिक रूप से एक दूसरे के साथ जीवन यापन करने से हमें रोकती हैं।

जैसा कि हम देखते हैं, इस अलगाव का आरम्भिक कारण आदम और हव्वा का परमेश्वर के विरूद्ध किया हुआ विद्रोह का कार्य था जब उन्होंने निषेधित फल को खा लिया था। अपने पाप में, हमारे प्रथम माता पिता ने परमेश्वर के अधिकार के ऊपर अपने अधिकार के होने का दावा किया। यह परमेश्वर की वाचा के विरूद्ध विद्रोह का कार्य था जिसने पूरी मानव जाति को परमेश्वर के शत्रु के रूप में परिवर्तित कर दिया।

इफिसियों को लिखे हुए अपने पत्र में, पौलुस मनुष्य के पाप में पतित होने के द्वारा सारी मानव जाति को शैतान के राज्य में सम्मिलित हो जाने को प्रगट करता है। हम परमेश्वर के निकट सहयोगी होने से दूर होते हुए आत्मिक युद्ध में शत्रु के सैनिक बन गए। परिणामस्वरूप, हम में से प्रत्येक अपने जीवन का आरम्भ पूर्ण रूप से परमेश्वर की कृपा और अनुग्रह से अलग होते हुए आरम्भ करता है। हम उसे केवल अपने स्वाभाविक शत्रु के रूप में जानते हैं। इफिसियों 2:1-3 में, पौलुस अपने पाठकों के अपने उद्धार से पहले के इस विवरण को प्रस्तुत करता है:

> **उसने तुम्हें भी जिलाया, जो अपने अपराधों और पापों के कारण मरे हुए थे जिन में तुम पहले इस संसार की रीति पर, और आकाश के अधिकार के हाकिम अर्थात् उस आत्मा के अनुसार चलते थे, जो अब भी आज्ञा न माननेवालों में कार्य करता है। इनमें हम भी सब के सब पहले अपने शरीर की लालसाओं में दिन बिताते थे, और शरीर, और मन की इच्छाएँ पूरी करते थे, और और लोगों के समान स्वभाव ही से क्रोध की सन्तान थे (इफिसियों 2:1-3)।**

ध्यान दें पौलुस इस विवरण को प्रत्येक उद्धार रहित, पतित मनुष्य के ऊपर लागू करता है, जब वह यह कहता है कि "हम भी सब" इसी तरीके से दिन बिताते थे। वह इसी तरह के एक कथन को रोमियों 5:10 में कहता है, जहाँ उसने ऐसे लिखा है:

> **क्योंकि बैरी होने की दशा में तो उसके पुत्र की मृत्यु के द्वारा हमारा मेल परमेश्वर के साथ हुआ (रोमियों 5:10)।**

हमारे तनावपूर्ण सम्बन्ध के कारण न केवल हम उससे दूर हो गए हैं, या अपितु हम उसकी तुरन्त की उपस्थिति में नहीं जा सकते हैं। यह उससे भी ज्यादा और बहुत ज्यादा बुरा है। मनुष्य के पाप में पतित होने ने हमें परमेश्वर का शत्रु बना दिया है।

और जबकि उसी सीमा में इसने मनुष्यों में एक दूसरे के साथ के सम्बन्ध को नुक्सान नहीं पहुँचाया, पतन अभी भी हमें एक दूसरे के कई तरीकों से अलग करता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है, कि हमारे पाप ने मनुष्यों में कई

तरह के शत्रुओं और युद्धों को उत्पन्न कर दिया है। परन्तु साथ ही यह हमारे सबसे अधिक सामान्य सम्बन्धात्मक समस्याओं के लिए भी उत्तरदायी है। ठीक उसी तरह से जिस तरह से इसने आदम और हव्वा में शर्म और वैवाहिक झगड़े को उत्पन्न किया, यह प्रत्येक विवाह में भी समस्याओं को उत्पन्न करता है। ठीक उसी तरह से जिस तरह से इसने उनकी सन्तान में हिंसा को उत्पन्न किया, यह प्रत्येक समाज में भी हिंसा को उत्पन्न करता है। यह हमें एक दूसरे के साथ झूठ बोलने, एक दूसरे के साथ घृणा करने, एक दूसरे की हानि पहुँचाने, एक दूसरे को ठेस पहुँचाने और एक दूसरे का अपमान करने का कारण बनता है। यह हमें ईष्यालु, द्वेषी, क्षमा न करने वाले बना देता है। और यहाँ तक कि विश्वासियों के मध्य में, परमेश्वर के द्वारा पाप के दासत्व हमारी हताशा से हमे बचा लेने के पश्चात् भी, हम अभी भी एक दूसरे को प्रेम और दया के साथ व्यवहार करने में संघर्षरत् होते हैं। जैसा कि याकूब ने याकूब 4:1-2 में विश्वासियों को लिखा:

> **तुम में लड़ाइयाँ और झगड़े कहाँ से आ गए? क्या उन सुख- विलासों से नहीं जो तुम्हारे अंगों में लड़ते-भिड़ते हैं? तुम लालसा रखते हो, और तुम्हें मिलता नहीं; इसलिये तुम हत्या करते हो। तुम डाह करते हो, और कुछ प्राप्त नहीं कर सकते; तुम झगड़ते और लड़ते हो। तुम्हें इसलिये नहीं मिलता, कि माँगते नहीं (याकूब 4:1-2)।**

मनुष्य के पाप में पतित होने ने हमें दोनों अर्थात् परमेश्वर और एक दूसरे से दूर कर दिया है। हमें परमेश्वर और दूसरे लोगों के साथ शान्तिपूर्ण, प्रेम भरे सम्बन्धों में रहने के लिए सृजा गया था। हमें एक दूसरे के साथ इकट्ठे कार्य करते हुए और साथ साथ जीवन बिताते हुए, उस परमेश्वर जिसकी हम सेवा करते हैं, के चारों ओर अपने जीवन को केन्द्रित करते हुए रहना था। परन्तु पाप में गिरने के कारण हम स्वार्थी, घमण्डी और घृणा से भर गए हैं। इसलिए, परमेश्वर की सेवा करने की अपेक्षा, हम उसका विरोध करते हैं। दूसरों के साथ स्वार्थरहित रहने की अपेक्षा, हम उसका लालच करते हैं जो उनके पास है और अपने प्रयोजनों की प्राप्ति के लिए उनका उपयोग करते हैं। नहीं, हम उतने बुरे नहीं है जितने हमें हो सकते थे। और हम अभी भी पतित मनुष्य के सम्बन्धों में भलाई के अंश को देखते हैं। परन्तु यह ऐसा नहीं है जैसा इसे होने चाहिए था। पाप ने परमेश्वर के साथ हमारे सम्बन्धों को हानि पहुँचाई, और इसे दूसरों के साथ हमारे सम्बन्धों में बुरी तरह से नुक्सान पहुँचाया। परमेश्वर के अनुग्रह से अलग होकर, इन समस्याओं का कोई भी समाधान नहीं है।

अभी तक हमने मनुष्य के पाप में पतित होने के परिणामों को भ्रष्टता और अलगाव के संदर्भों में विचार किया। अब हम मृत्यु के विषय को सम्बोधित करने के लिए तैयार हैं।

मृत्यु

उत्पत्ति 2 :17 में, परमेश्वर ने आदम और हव्वा से कहा था कि यदि वे भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष के फल को खा लेते हैं, तो वे मर जाएंगे। तब, आदम के द्वारा फल लेने के पश्चात्, उत्पत्ति 3:19 परमेश्वर के द्वारा आदम की भौतिक मृत्यु के होने के शाप का विवरण देता है। परन्तु जैसा कि हमने पहले उल्लेख कर दिया है, आदम का पाप और उसका शाप केवल आदम को ही प्रभावित नहीं किया था। कुल मिलाकर, वह पूरी मानव जाति के लिए वाचा का प्रधान था। वह हमारा राजा था। इसलिए, जब उसने परमेश्वर के विरूद्ध विद्रोह किया, हमारा पूरा मानवीय राज्य अपराध बोध की छाया के अधीन आ गया और परिणामस्वरूप, मृत्यु के शाप के अधीन। जैसा कि पौलुस रोमियों 5:12-17 में कहता है:

> **इसलिये जैसा एक मनुष्य के द्वारा पाप जगत में आया, और पाप के द्वारा मृत्यु आई, और इस रीति से मृत्यु सब मनुष्यों में फैल गई, इसलिये कि सब ने पाप किया... [जब] एक मनुष्य के अपराध से बहुत लोग मरे... [तो] जब एक मनुष्य के अपराध के कारण मृत्यु ने उस एक ही के द्वारा राज्य किया (रोमियों 5:12-17)।**

पौलुस कहता है कि सभी ने पाप किया क्योंकि परमेश्वर ने आदम के पाप को न केवल आदम के लेखे गिना, अपितु बाकी की प्राकृतिक मानवता के लेखे भी गिना। और इस पाप का परिणाम हमारी मृत्यु हुआ। मूल पाप के वैधानिक दृष्टिकोण से, प्रत्येक मनुष्य ठीक उसी तरह से अपराधी है जैसे आदम अपराधी था। इसलिए,यदि

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

आदम मृत्यु के अधीन था – जैसा कि वह था – तब हम भी हुए। और इसलिए हम सभी मरते हैं। यहाँ तक मसीह में विश्वास कर लेने के पश्चात् भी, पाप का शाप हमारे शरीरों के ऊपर लटका रहता है। परिणामस्वरूप, हम सभी अन्तत: मरते और आदम के जैसे ठीक वैसे ही मिट्टी में जा मिलते हैं।

अब, जब परमेश्वर ने उसे शाप दिया तब तुरन्त आदम नहीं मरा – कम से कम भौतिक रूप में। और यही बात हम सब बाकी लोगों के लिये सत्य ठहरती है। परमेश्वर इस पृथ्वी पर हमें एक भौतिक जीवन व्यतीत करने की अनुमति देता है। परन्तु पवित्रशास्त्र यह संकेत नहीं देता कि जैसे ही आदम को शाप दिया गया वह आत्मिक रूप से मर गया था, और यह कि उसकी प्राकृतिक सन्तान विश्वास में आने से पहले आत्मिक रूप से मरी हुई हैं।

इफिसियों 2 में आत्मिक मृत्यु के प्रश्न को बड़ी अच्छी तरह से सम्बोधित किया हुआ है। मौलिक रूप से, पौलुस कहता है कि हम हमारे पापों और हमारे अपराधों के कारण मरे हुए हैं। इसलिये वहाँ पर यह समझ पाई जाती है कि हम मरे हुए हैं, और एक मुर्दा व्यक्ति वास्तव में परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए कुछ नहीं कर सकता है। और मैं सोचता हूँ, कि विशेष रूप से, पौलुस हमारे कार्यों और कैसे परमेश्वर इन कार्यों को देखता है के विषय को सम्बोधित कर रहा है। वह वचन अध्याय 2 में आगे कहता चला जाता है... कि हम इस संसार के प्रधान का अनुसरण कर रहे हैं। हम उन बातों को कर रहे हैं जिन्हें वह चाहता है कि हम करें क्योंकि यही हमारा प्राकृतिक स्वभाव है। जब हम हमारे पापों में मरे हुए होते हैं, तो हम मृत्यु के प्रधान शैतान का अनुसरण करते हैं। जब हम मसीह में जी उठते हैं...हमें एक नया जीवन दिया जाता है। यह एक नया जीवन है। यह एक ऐसा जीवन है जिसमें हमें कार्य करने की अनुमति दी जाती है, ऐसे कार्यों को करने की जो परमेश्वर को प्रसन्न करने योग्य होते हैं, परन्तु केवल उसी ही के द्वारा सम्भव होता हैं...यीशु मसीह के जीवन और मृत्यु से जी उठने और हमारे द्वारा उसमें विश्वास किए जाने के द्वारा सम्भव होते हैं।

- रेव्ह तिमोथी माऊँटफोर्ट

पौलुस आत्मिक मृत्यु को इफिसियों 2:1-5 में विवरण देता है जहाँ वह ऐसे कहता है:

उसने तुम्हें भी जिलाया, जो अपने अपराधों और पापों के कारण मरे हुए थे। जिनमें तुम पहले इस संसार की रीति पर, और आकाश के अधिकार के हाकिम अर्थात् उस आत्मा के अनुसार चलते थे, जो अब भी आज्ञा न माननेवालों में कार्य करता है। इनमें हम भी सब के सब पहिले अपने शरीर की लालसाओं में दिन बिताते थे...परन्तु...परमेश्वर... ने जब हम अपराधों के कारण मरे हुए थे, तो हमें मसीह के साथ जिलाया (इफिसियों 2:1-5)।

जिन लोगों का विवरण पौलुस देता है वह भौतिक रूप से जीवित थे। वे पाप में सलंग्न थे और उन्होंने आत्मिक युद्ध में परमेश्वर के विरूद्ध लड़ाई की थी। परन्तु पौलुस अभी भी उनको "मृतक" कह कर पुकारता है क्योंकि वे परमेश्वर के न्याय के अधीन खड़े हुए थे और क्योंकि उनमें परमेश्वर को प्रसन्न करने वाली आवश्यक आत्मिक जीवन शक्ति की कमी थी। पौलुस साथ यह भी कहता है कि यहाँ तक विश्वासी भी उसी तरह से "मृतक" हुआ करते थे। सारे मनुष्य इसी आत्मिक मृत्यु की परिस्थिति का सामना तब तक करते रहेंगे जब तक हम मसीह में आत्मिक जीवन को प्राप्त नहीं कर लेते। जैसा कि पौलुस ने रोमियों 8:10 में लिखा है:

यदि मसीह तुम में है, तो देह पाप के कारण मरी हुई है; परन्तु आत्मा धर्म के कारण जीवित है (रोमियों 8:10)।

यहाँ पौलुस कहता है कि यदि मसीह हम में वास करता है तो हमारे पास आत्मिक जीवन है। इसका निहितार्थ यह हुआ, कि यदि मसीह हम में *नहीं* है, तो हम आत्मिक रूप से मरे हुए हैं।

पाप में आदम के गिरने के कारण, मनुष्य जब हमारी रचना की जाती है तब तुरन्त आत्मिक मृत्यु, और अन्तत: भौतिक मृत्यु का सामना करता है। और इससे भी अधिक बुरा, यदि हम कभी भी मसीह के पास विश्वास करते हुए नहीं आते हैं, यदि हमें कभी भी पाप के शाप से परमेश्वर के अनुग्रह के कारण छुटकारा नहीं दिया गया है,

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

तो हम निरन्तर नरक में दोनों अर्थात् आत्मिक और भौतिक मृत्यु का सामना करेंगे। और ठीक वर्तमान संसार में आत्मिक मृत्यु के जैसे, यह एक सचेत अनुभव होगा। छुटकारा न पाए हुए सदैव के लिए अस्तित्व में रहते हुए, दोनों अर्थात् देह और प्राण में शाश्वतकाल के लिए पाप के शाप की पीड़ा को सहेंगे। पाप का श्राप वास्तविकता में बहुत अधिक है। परमेश्वर के अनुग्रह के कारण, हम अभी पाप के प्रभाव के विरूद्ध संघर्ष कर सकते हैं, और भविष्य में इससे पूरी तरहे से बच सकते हैं।

सारांश

पाप के श्राप के ऊपर इस अध्याय में, हमने मानव जाति और व्यक्तिगत् लोगों में पाप की उत्पत्ति का पता लगाया और पाप के अन्तिम लेखक के ऊपर चर्चा की है। हमने साथ ही पाप के अनिवार्य चरित्र का अधर्म और प्रेमरहित के रूप में विवरण दिया। हमने पाप के परिणामों भ्रष्टता, अलगाव और मृत्यु के ऊपर विचार किया है।

यदि हमको मसीह में कोई आशा न होती तो मनुष्य के पाप का बोझ हम में हताशा को ले आता। जैसा कि हमने इस अध्याय में देखा, यह एक छोटी बात नहीं है। यह एक भयानक बोझ है जो हमें इस जीवन की भ्रष्टता के साथ जकड़ देता है, और शाश्वतकाल की मृत्यु की ओर खींच लिए जाता है। *यात्रा स्वप्नोदय* नामक अपनी प्रसिद्ध पुस्तक में, जॉन बनियन पाप का विवरण पीठ के पीछे बँधे हुए भारी बोझ के साथ देता है जिसे केवल मसीह के क्रूस के द्वारा ही हटाया जा सकता है। हमारे अगले अध्याय में, हम यह देखेंगे कि यह कैसे घटित होता है जब हमारा उद्धारकर्ता हमें पाप के श्राप से छुटकारा प्रदान करता है।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम